अध्याय–1

पशु प्रजनन

ऋतु चक्र**(Oestrus Cycle)**

गाय–भैंस जवानी की अवस्था पर पहुॅचने पर अथवा ब्याने के कुछ दिन बाद गर्मी पर आती हैं। यदि पशु गर्भ धारण नहीं करता है तो लगभग 21 दिन बाद पुनः गर्मी पर आता है। पशु के गर्भधारण न करने पर, मादा पशु के गर्मी पर आने से पहले, गर्मी पर आने पर तथा गर्मी पर आने के बाद में पशु के जनन अंगों में एक निश्चित परिवर्तन होता है।

परिभाषा

मादा पशु के जवान होने पर, उसके जनन अंगों में निश्चित समय पर चक्र के रूप में परिवर्तन होते हैं। जनन अंगों के इस चक्र के रूप में परिवर्तनों को ऋतु चक्र कहते हैं।

जवानी**(Puberty)**

मादा पशु की वह अवस्था/आयु जिसमें उसका प्रथम ऋतु चक्र प्रारम्भ होता है, जवानी की अवस्था / आयु कहते हैं।

जनन अंगों का यह परिवर्तन चक्र के रूप में बराबर होता है।

गाय–भैंस में ऋतु चक्र की अवधि सामान्यतः 21 दिन (18–24) दिन होती है। ऋतु चक्र को उसकी अवधि के आधार पर 4 प्रकारों में बॉटा जा सकता है –

1. नियमित ऋतु चक्र – जब ऋतु चक्र की अवधि 18 से 24 दिन के बीच की होती है तो उसे नियमित ऋतु चक्र कहा जाता है।
2. लघु ऋतु चक्र – यदि ऋतु चक्र की अवधि 18 दिन से कम होती है तो उसे लघु ऋतु चक्र कहा जाता है।
3. दीर्घ ऋतु चक्र – यदि ऋतु चक्र की अवधि 24 दिन से अधिक होती है तो उसे दीर्घ ऋतु चक्र कहा जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

4. अनियमित ऋतु चक्र – यदि एक बार ऋतु चक्र लघु है तथा दूसरा दीर्घ है या इसका उल्टा अर्थात् एक दीर्घ चक्र है एवं दूसरा लघु चक्र है तो ऐसे चक्रों को अनियमित चक्र कहा जाता है। लघु ऋतु चक्र, दीर्घ ऋतु चक्र या अनियमित ऋतु चक्र के पशुओं को कृत्रिम वीर्यदान नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि उनको गर्भधारण करने की संभावना बहुत ही कम रहती है। ऐसे पशुओं का उपचार करके उनके ऋतु चक्र को नियमित करना चाहिए।

जब पशु गर्मी पर आता है तो उस अवस्था को ईस्ट्रस कहते हैं। गर्मी से पहले की अवस्था को प्राईस्ट्रस कहते हैं। गर्मी के बाद की अवस्था को मेटईस्ट्रस कहते हैं। मेटईस्ट्रस के बाद की अवस्था तथा प्रोईस्ट्रस से पहले की अवस्था को डाईस्ट्रस कहते हैं। इस प्रकार एक ऋतु चक्र को निम्न चार अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है –

(1) प्रोईस्ट्रस (2) ईस्ट्रस (3) मेटईस्ट्रस (4) डाईईस्ट्रस

1. <u>प्रोईस्ट्रस **(Pro Oestrus)**</u>

1. यह पशु के गर्मी में आने से पहले की अवस्था है, तथा 02–03 दिन तक रहती है।
2. मस्तिष्क के पीछे स्थित पिट्यूटरी ग्रन्थि के बॉये हिस्से से फालिकिल स्टीमुलेटिंग हारमोन (F.S.H.) निकलने लगता है।
3. फालिकिल स्टीमुलेटिंग हारमोन (F.S.H.) के प्रभाव से डिम्बाशय पर स्थित फालिकिल्स बड़ा (परिपक्व) होना शुरू हो जाते हैं।
4. परिपक्व फालिकिल के अन्दर एक द्रव जिसे ईस्ट्रोजन हारमोन कहते हैं तथा रज/डिम्ब होता है।
5. फालिकिल के अन्दर का ईस्ट्रोजन रक्त में मिलकर पूरे शरीर में घूमता है तथा अपना प्रभाव जनन अंगों पर डालता है, जिसके कारण पूरे जनन अंगों में रक्त का प्रवाह बढ़ जाता है।
6. ईस्ट्रोजन के प्रभाव से योनि ओष्ठों पर सूजन आ जाती है और योनि ओष्ठों के अन्दर की त्वचा लाल हो जाती है।
7. ईस्ट्रोजन के प्रभाव से गर्भाशय मुख कड़ा हो जाता है तथा धीरे–धीरे खुलने लगता है तथा गर्भाशय मुख से चिकना पारदर्शक पदार्थ निकलते लगता है।
8. ईस्ट्रोजन के प्रभाव से गर्भाशय शरीर तथा गर्भाशय सींगों में रक्त का प्रवाह बढ़ने से तनाव आ जाता है।
9. यह प्रोइस्ट्रस अवस्था 2 से 3 दिन तक रहती है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

2. ईस्ट्रस **(Oestrus)**

1. यह पशु की गर्मी की अवस्था है।
2. फालिकिल के पूरा परिपक्व होने/बढ़ने से ईस्ट्रोजन हारमोन की मात्रा सबसे अधिक होती है।
3. ईस्ट्रोजन हारमोन के प्रभाव से योनि ओष्ठ सूज जाते हैं तथा अन्दर की त्वचा का रंग लाल हो जाता है।
4. गर्भाशय मुख सूजकर कड़ा और कठोर हो जाता है तथा पूरी तरह खुल जाता है।
5. गर्भाशय मुख से निकलने वाला पारदर्शी चिकना स्राव (पदार्थ) योनि मुख से लार के रूप में बाहर निकलने लगता है।
6. ईस्ट्रोजन हारमोन के अधिक होने पर फालिकिल स्टीमुलेटिंग हारमोन (F.S.H.) की मात्रा कम होने लगती है।
7. गायों में ईस्ट्रस (गर्मी की अवस्था) 12 से 24 घन्टे तथा भैंसों में 24 से 36 घन्टे होती है।

3. मेटाईस्ट्रस **(Meta Oestrus)**

1. इस अवस्था में पशु की गर्मी समाप्त हो जाती है।
2. ल्यूटिनाइजिंग हारमोन (L.H.) के कारण परिपक्व फालिकिल की दीवार पतली होकर टूट जाती है।
3. फालिकिल की दीवार टूटने से रज (डिम्ब), इनफन्डीबुलम से होता हुआ रजवाहिनी में चला जाता है। इस क्रिया को रज स्खलन कहते हैं।
4. रजस्खलन की क्रिया पशु की गर्मी समाप्त होने के 8 से 12 घन्टे के बाद होती है।
5. डिम्बाशय में रज के निकलने के बाद खाली स्थान पर कारपस ल्युटियम नामक रचना बनती है।

4. डाईइस्ट्रस **(Di Oestrus)**

1. पिट्युटरी ग्रन्थि से निकलने वाला ल्यूटियो ट्रोपिक हारमोन (L.T.H.) के प्रभाव से कार्पस ल्यूटियम पूर्ण विकसित हो जाता है।
2. पूर्ण विकसित कारपस ल्युटियम से प्रोजेस्ट्रान हारमोन निकलने लगता है।
3. कारपस ल्युटियम के प्रभाव से गर्भाशय की मॉसपेशियाँ विकसित हो जाती हैं, जिससे कि गर्भाशय भ्रूण को रखने (पोषण) आदि की तैयारी/ व्यवस्था कर सकें।
4. यदि पशु गर्भधारण कर लेता है तो यह अवस्था गर्भावस्था तक बनी रहती है तथा कारपस ल्यूटियम

NOT FOR COMMERCIAL USE

गर्भावस्था तक डिम्बाशय पर बना रहता है।

5. यदि पशु गर्भधारण नही करता है तो 18 वें दिन से कारपस ल्यूटियम सिकुड़ना शुरू हो जाता है तथा इस अवस्था के अन्त में पशु के जनन अंग दूसरे ऋतु चक्र में प्रवेश कर जाते हैं।

गाय और भैंस में गर्मी आने के लक्षण –

1. उत्तेजना और बेचैनी
2. चीखना
3. कम खुराक
4. अन्य पशु पर चढ़ना अन्यथा अन्य पशुओं को अपने पर चढ़ने देना
5. योनि संकुचित हो जाती है और सूजन भी दिखाई देती है तथा योनि मार्ग से पारदर्शी लार सा स्राव भी निकलता है
6. अन्य पशुओं को चाटना
7. बार–बार मूत्र त्याग करना और पूँछ को ऊँचा उठाना

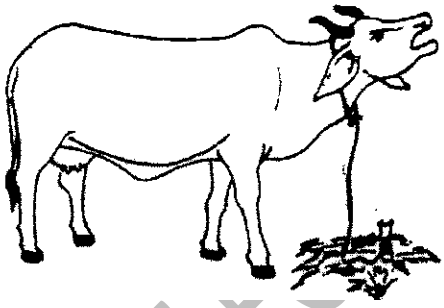

चीखना

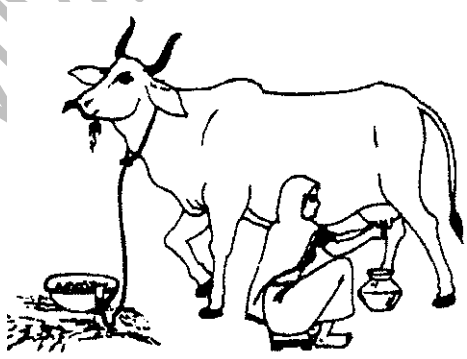

दूध में कमी

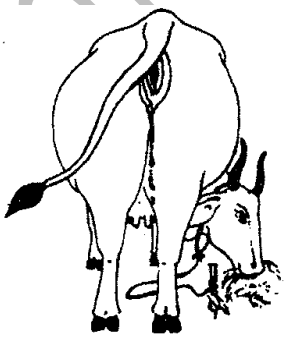

योनि में सूजन तथा पारदर्शी लार सा स्राव

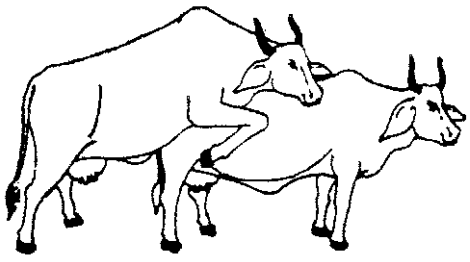

अन्य पशु पर चढ़ना

NOT FOR COMMERCIAL USE

ऋतुकार के दौरान प्रजनन अंगों में बदलाव –

1. ग्रेफियन फौलिकिल का परिपक्व होना
2. गुदाद्वार से किए जाते परीक्षण में गर्भाशय मुख की सख्ताई/कठोरता मालूम पड़ती है और गर्भाशय की इस कठोरता को युटराईन टोन कहा जाता है।
3. रजवाहिनी की सिकुड़न में वृद्धि होती है।
4. प्रजनन अंगों में खून का परिभ्रमण बढ़ता है।
5. रजग्रन्थि से स्राव शुरू हो जाता है।
6. गर्भाशय मुख खुल जाता है।

गाय और भैंसों का जननीय मापदण्ड –

पशु	यौवन प्राप्ति की उम्र (माह)	वयस्क पशु का वजन (कि0ग्रा0)	जातीय परिपक्वता की उम्र (माह में)	ऋतुचक्र की अवधि (दिन)	ईस्ट्रस की अवधि (घन्टे में)
गाय(देशी)	24–36	200–300	36–48	18–21	12–24
गाय(जर्सी/संकर)	15–18	300–400	15–22	18–24	12–18
गाय (होलस्टेइन –फ्रीजियन)	15–18	400–550	15–22	18–24	12–18
भैंस(सुरती)	16–24	250–300	24–30	21–22	20–24
भैंस(मुर्रा)	20–30	350–550	25–30	21–22	24–36

सभी पशुओं में प्रथम ऋतु में आने के चिन्ह अन्यथा यौवन की उम्र उत्पत्तिकाल से निश्चित होती है। कम और ज्यादा, यह उम्र से ज्यादा पशुओं के वजन पर आधारित होता है। कुछ बाह्य कारणों से शरीर का वजन बढ़ता है जैसे कि खुराक (पोषण), सूर्य प्रकाश, नमी, तापमान, पर्यावरण, व्यवस्था और आन्तरिक कारण जैसे कि पशु का आन्तःस्राव और मानसिक स्थिति।

रज स्खलन **(Ovulation)** –

ग्रेफियन फौलिकिल से अण्ड (Ova) की अलग हो जाने की क्रिया को रज स्खलन कहा जाता है। एल0एच0, फौलिकिल दीवार पर प्रक्रिया करके रजस्खलन को प्रेरित करता है, जो बाद में कमजोर हो जाता है और आखिर में अण्ड को और फौलिक्युलर पदार्थ को मुक्त करता है। इस प्रक्रिया को रज स्खलन कहा जाता है। इनके मुक्त होने के बाद अण्ड चिमनी आकार की रजवाहिनी

NOT FOR COMMERCIAL USE

(Infandibulam) में अण्ड प्रवेश करता है और वह धीरे से गर्भाशय सींग की दिशा में प्रस्थान करता है।

वीर्यदान का योग्य समय–

वीर्यदान की क्रिया तब करनी चाहिए जब गर्भधारण कराने की संभावना ज्यादा हो क्योंकि पुनः संवर्धन पशु (गाय/भैंस) दूध देने के लिए त्वरित सक्षम होते हैं।

उत्तम प्रकार के वीर्य द्वारा कृत्रिम वीर्यदान से सफल गर्भाधान की तकनीक निम्न बिन्दुओं पर आधारित हैं–

– रजस्खलन और वीर्यदान करने के समय का सम्बन्ध

– शुक्राणु का रज के पास पहुॅचने का समय

– शुक्राणु का जीवन

– रज का जीवन

मादा पशु को गर्मी में आने के बाद 12–16 घन्टे में उसे वीर्यदान करने से गर्भधारण की संभावना सबसे ज्यादा रहती है। इसलिए गर्मी के प्रथम चिन्हों के मालूम पड़ने से 12 घन्टे बाद कृत्रिम वीर्यदान के लिए पशु को ले जाना चाहिए। यदि पशु सुबह गर्मी में आएं तो इस दिन की शाम को और शाम को गर्मी में आएं तो दूसरे दिन सुबह वीर्यदान देना उचित है। कुछ पशु गर्मी में लम्बी अवधि तक रहते हैं। अगर ऐसे पशु में गर्मी का सतत होना मालूम पड़े तो 12–24 घन्टे बाद फिर से वीर्यदान कराने की सलाह दी जाती है, जिससे गर्भधारण की संभावना बढ़ती है। गर्भधारण और गर्भावस्था की उच्चतम दर पाने के लिए ऋतुकाल (गर्मी) में आये पशु को गर्भाशय मुख के मध्यभाग में वीर्यदान करना चाहिए।

फलीकरण–

ज़ायगोट (युग्मनज), एक कोष रचने की शुक्राणु और अण्ड के मिलन की प्रक्रिया को फलीकरण कहा जाता है। रजग्रन्थि से रज अलग होने के बाद रजवाहिनी के गलनी आकार के भाग से रजवाहिनी में प्रवेश करता है और रजवाहिनी में फलीकरण तक आगे बढ़ता है। कृत्रिम वीर्यदान के बाद शुक्रकोष रजवाहिनी में मात्र चार मिनटों में पहुॅचता है। लगभग 100 शुक्राणु गर्भाशय के सींग से होकर रजवाहिनी तक पहुॅचते हैं, परन्तु इन सौ में से केवल कुछ शुक्राणु ही रजवाहिनी में फलीकरण स्थान तक पहुॅचते हैं, और इसमें से एक ही शुक्राणु रज के भीतर प्रवेश पा सकता है। मादा के

NOT FOR COMMERCIAL USE

जननांग में शुक्राणु 24–30 घन्टे तक प्रजननक्षम रहता है और अण्ड का जीवनकाल 12 से 20 घन्टे का होता हैं।

समय से पूर्व घन्टे	साधारण	प्रजनन समय	विलम्ब से
घन्टे 0 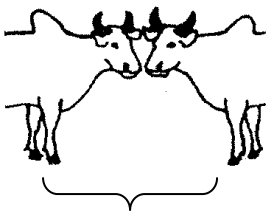 गर्मी से पूर्व (6–10 घन्टे) (1) एक गाय दूसरे को सूंघती है। (2) अन्य पशु पर चढ़ने का प्रयास (3) योनि में लाल नमी और थोड़ी सी सूजन	6 9 18 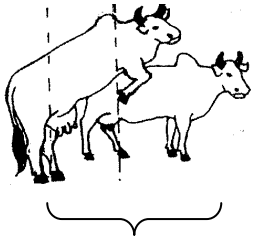 लगातार गर्मी में (18 घन्टे) (1) दूसरी गायों पर चढ़ने पर शान्त (2) बारम्बार चीखना/ रँभाना (3) बेचैनी (4) दूसरी गायों पर चढ़ना (5) चारा न खाना और दूध नहीं देना (6) प्रथम गाय का चढ़ना (7) योनि में लाल नमी (8) योनि से म्युकस का निकलना (9) ऑख की पुतली फैली हुई।	24 28 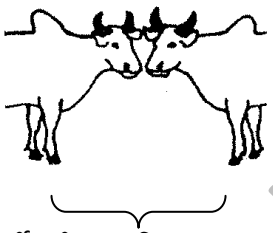 गर्मी की समाप्ति बाद (10 घन्टे) (1) गाय खड़ी नहीं रहती (2) योनि से म्युकस का सम्पूर्ण निकाल	रज का जीवनकाल (6–10 घन्टे) (कुछ परीक्षण रज का जीवनकाल 20 घन्टे बताते हैं) सामान्य 10–12 घन्टे मादा के जननांग में वीर्य का जीवन वीर्य के गुण अनुसार (16–20 घन्टे)

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–2

कृत्रिम वीर्यदान

कृत्रिम वीर्यदान वैज्ञानिक पद्धति है जिसमें सॉड का वीर्य कृत्रिम योनि के जरिए एकत्रित किया जाता है। तदनन्तर, वीर्य का प्रयोगशाला में परीक्षण, प्रक्रिया और परिरक्षण होता है, और अन्ततः नर जननेन्द्रिय के अलावा, मादा जननेन्द्रिय के भीतर निक्षेपण होता है।

संक्षिप्त इतिहास

इतिहास के अनुसार, कृत्रिम वीर्यदान का आरम्भ 1322 में अरब देश में हुआ था। पहली बार एक अरब ने नर घोड़े के द्वारा मादा को फलाने के बाद योनि में से उसका वीर्य रूई की छोटी सी गुटिका में निकाल लिया। तत्पश्चात् अपनी घोड़ी की जननेन्द्रिय में रूई की गुटिका को रख दिया, नतीजे में गर्भाधान हुआ। सन् 1780 में इटली के वैज्ञानिक लेजरों स्पेलेन्जी ने घरेलू जानवरों पर कृत्रिम वीर्यदान का वैज्ञानिक प्रयोग प्रथम बार किया, उन्होंने साबित कर दिया कि गर्भधारण शक्ति शुक्राणु में होती है, न कि तरल भाग में। इसके बाद बहुत से वैज्ञानिकों ने इस क्षेत्र में सफल परिणाम के साथ अनुसन्धान किए हैं। डॉक्टर सम्पत कुमार ने कृत्रिम वीर्यदान का उपयोग 1 अगस्त, 1939 में पैलेस डेरी फार्म, मैसूर में किया। इसके बाद, आई0वी0आर0आई0 ने डॉक्टर पी0 भट्टाचार्य के नेतृत्व में सन् 1942 में प्रयोगलक्षी कार्य शुरू किया। सन् 1952 तक भारत में कलकत्ता, मद्रास, बैंगलूर, हिसार, और नागपुर जैसे शहरी क्षेत्रों तक ही वीर्यदान की प्रवृति सीमित थी। तदनन्तर, की विपेज योजना और सघन पशु विकास कार्यक्रम (आई0सी0डी0पी0) के अर्न्तगत भारत भर के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत से प्रकेन्द्र स्थापित किए गए। आज इस तकनीक की उपयोगिता शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में स्वीकार की जा रही हैं और इसे पशु–संवर्घन हेतु आवश्यक माना जा रहा है। सम्प्रति, सभी राज्यों के पशुपालक विभाग, सहकारी दूध संगठन एवं संलग्न स्वैच्छिक कृत्रिम वीर्यदान तकनीक का उपयोग करने लगे हैं और पशु और भैंस संवर्धन कार्यक्रमों में सलंग्न हैं।

कृत्रिम वीर्यदान के लाभ

(क) प्राकृतिक विधि से एक नर पशु एक वर्ष में 80 से 100 मादा पशुओं को गर्भधारण करा सकता है परन्तु कृत्रिम वीर्यदान से 12,000 से 15,000 मादा पशुओं को गाभिन किया जा सकता है।

(ख) विभिन्न सॉड़ों से वीर्य एकत्र किया जा सकता है। यहॉ तक कि जो सॉड़ सम्भोग नहीं कर

NOT FOR COMMERCIAL USE

सकते हैं, उनका वीर्य भी एकत्र किया जा सकता है।

(ग) वीर्य का संग्रह करके, उसका पहले प्रयोगशाला में परीक्षण किया जाता है। उसमें प्रतिजैव मिलाया होता है और इस तरह गर्भाशय के रोगों को रोका जा सकता है।

(घ) नस्ल संकरण सॉड़ों का अधिकतम उपयोग किया जाता है।

(च) संक्रामक रोगों की जॉच की जा सकती है।

(छ) सन्तति परीक्षण शीघ्र हो सकता है और संकर सॉड़ की तुरन्त जॉच हो सकती है।

(ज) छोटे किसानों के लिए कृत्रिम वीर्यदान ज्यादा लाभदायी है, उन्हें सॉड़ रखने की जरूरत नहीं हैं।

(ट) पशु जब गर्मी में आता है तब किसान को संकर सॉड़ की खोज करने की कोई जरूरत नहीं है।

(त) चूँकि सॉड़ों को कम संख्या में रखना पड़ता है, अतः यह पद्धति कम खर्च वाली है।

कृत्रिम वीर्यदान की सीमाएँ

सामान्य सीमाएँ –

(क) कृत्रिम वीर्यदान की रीति उच्च तकनीक–युक्त है और इसके समुचित कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है कि कृत्रिम वीर्यदानकर्ता इस दिशा में पर्याप्त अनुभवी और दक्ष हो।

(ख) सभी सॉड़ों पर वीर्य संकलन की यह पद्धति लागू नहीं होगी।

(ग) वीर्य एकत्रीकरण, परीक्षण, प्रक्रिया और संग्रह के लिए खास देखभाल जरूरी है।

(घ) यदि उपकरण शुद्ध और कीटाणुरहित नहीं किए गए हो तो प्रजनन अंगों पर बहुत से रोगों का असर हो सकता है और प्राकृतिक रीति से होते सम्भोग से ज्यादा नुकसान हो सकता है।

भारत के 70 से 80 प्रतिशत किसान अपने जीवन के निर्वाह हेतु पशुपालन पर निर्भर है। अन्ध विश्वास और वैज्ञानिक शिक्षा की कमी के कारण उन लोगों में यह मान्यता है कि कृत्रिम वीर्यदान से गाय या भैंस को प्राकृतिक सन्तोष मिलता नहीं हैं। वे यह भी मानते हैं कि कृत्रिम वीर्यदान द्वारा (विदेशज सॉड़ का वीर्य देशज गाय में उपयोग में लिया जाता है।) यदि नर बच्चा पैदा हुआ तो उसका हल चलाने में प्रयोग हो नहीं सकता है। अन्ध विश्वास और आधारहीन मान्यताओं के कारण कृत्रिम वीर्यदान को भारत में लोकप्रियता प्राप्त नहीं हुई हैं। 80 प्रतिशत से ज्यादा पशुओं का संवर्धन प्राकृतिक सम्भोग रीति से किया जाता है। यदि कृत्रिम वीर्यदानकर्ताओं को उचित विस्तृत प्रशिक्षण दिया जाए तो कृषक–वर्ग में व्याप्त अन्ध विश्वासों एवं आधारहीन मान्यताओं को बहुत बड़ी सीमा तक समाप्त किया जा सकता है और कृत्रिम वीर्यदान कार्यक्रम का सम्पूर्ण लाभ मिल सकता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

कृत्रिम वीर्यदान क्या हैं ?

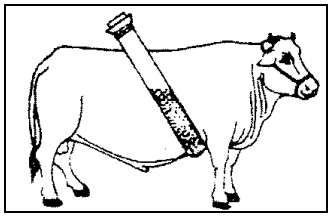

उच्च नस्ल सॉड़ के वीर्य का उपयोग

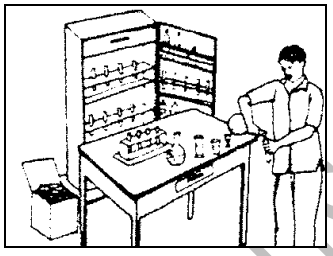

वीर्य को सुरक्षित रखने के लिए तैयार तनुकरण का उपयोग करें और उसे प्रशीतन में रखें

वीर्य स्वच्छ और जीवाणु रहित कॉच की वीर्यदान नलिका में रखें

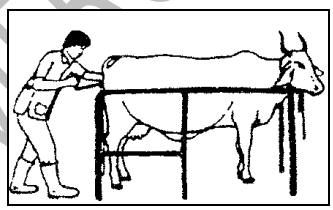

गाय की समुचित गर्मी सुनिश्चित करने के पश्चात् ही वीर्यदान किया जाए

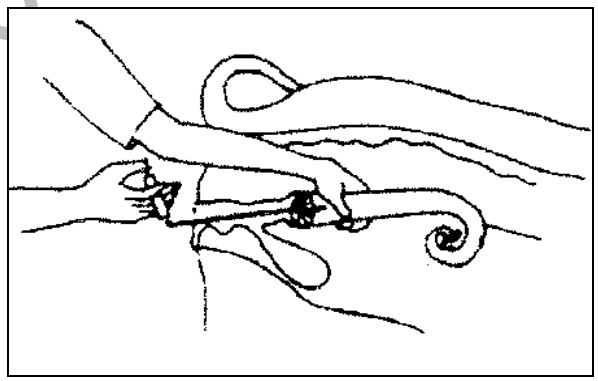

चित्र में दिखाई गई कृत्रिम वीर्यदान तकनीक का उपयोग करें

NOT FOR COMMERCIAL USE

विदेशज सॉड़ के साथ संकरण–

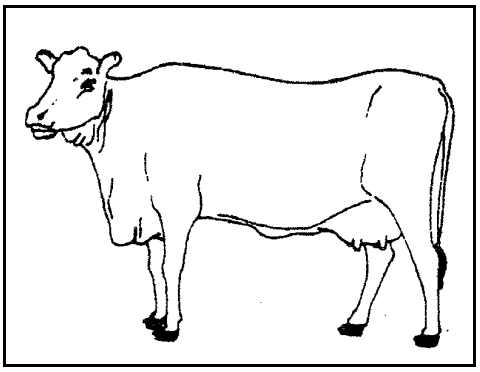

जर्सी गाय (सामान्य प्रदर्शन)
12 माह की आयु पर गर्भधारण योग्य
24 माह की आयु पर प्रथम ब्यात
दो ब्यात के बीच अन्तर 14 माह
एक ब्यात में दूध उत्पादन 3500लीटर
दूध में फैट 5.5 प्रतिशत

देशज गाय (सामान्य प्रदर्शन)
36 माह पर गर्भधारण योग्य
48 माह की आयु पर प्रथम ब्यात
दो ब्यात के बीच अन्तर 24 माह
एक ब्यात में दूध उत्पादन 600लीटर
दूध में फैट 4.0 प्रतिशत

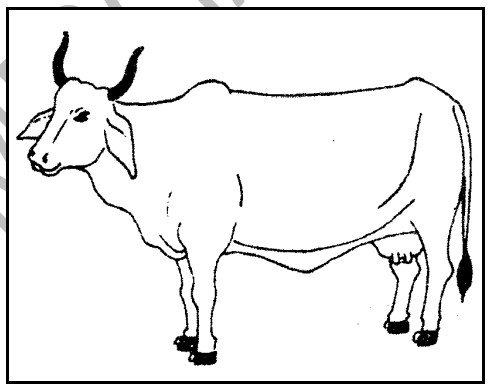

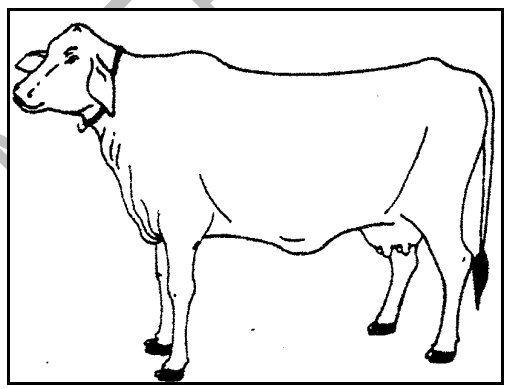

संकर गाय (सामान्य प्रदर्शन)
12 माह की आयु पर गर्भधारण
30 माह की आयु पर प्रथम ब्यात
दो ब्यात के बीच अन्तर 15 माह
दूध उत्पादन प्रतिदिन 8 लीटर
दूध में फैट 4.5 प्रतिशत

अध्याय–3

कृत्रिम वीर्यदान केन्द्र की व्यवस्था प्रणाली

पशुओं और भैंसों में कृत्रिम वीर्यदान हेतु आवश्यक है कि ग्राम के कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र में कठधरा हो। ऐसा देखा गया है कि कभी–कभी वीर्यदान करते समय पशु बहुत अशान्त (व्याकुल) हो जाता है, जिससे कि वीर्यदानकर्ता को बहुत कष्ट होता है। ऐसी स्थिति में गर्भाशय को चोट पहुॅचने की पूरी सम्भावना रहती है और वीर्य के गर्भाशय के बाहर रहने की सम्भावना अपेक्षाकृत अधिक रहती है। इन सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखकर कठधरे का उपयोग लाभदायी होता है। कठधरा बनाते समय ध्यान रखना चाहिए कि वहॉ की जमीन कंक्रीट की या पक्की खुरदरी और छायावाली हो। वीर्यदान–स्थल पर छत होनी चाहिए जिससे कि बरसात का असर न हो। इससे वीर्य पर सीधा सूर्य प्रकाश भी नहीं पड़ता।

कृत्रिम वीर्यदान के उपयोगी साधन–

(1) किडनी ट्रे (2) साबुन (3) एप्रन (4) गम बूट
(5) तौलिया (6) गरम पानी (7) फावड़ा (8) घड़ा
(9) साफ पानी (10) झाड़ू (11) वीर्यदान करने का कन्टेनर
(12) सिरिंज (13) रबड़ की नली (14) थर्मामीटर (15) लम्बा चिमटा।

वीर्यदान के लिए उपयोग में लाये जाने वाले सभी सामान को सूखे कागज़ के रूमाल से साफ करके उसे खास डिब्बे में रखना चाहिए ताकि उस पर धूल न लगे।

किए गये वीर्यदान और भविष्य में किए जाने वाले वीर्यदान का अभिलेखन करने के लिए कृत्रिम वीर्यदान केन्द्र में कार्ड सिस्टम रखना जरूरी है। वीर्यदान केन्द्र में जाने के बाद पशु मालिक को पशु की पहचान, वीर्यदान की तारीख, सॉड़ से कितनी बार फलाई आदि जानकारियॉ कार्ड में लिख कर दी जाती हैं। पशु मालिक को तीन महीने बाद पशु की गर्भाधान–चिकित्सा कराने जायें तब यह कार्ड साथ में अवश्य रखें, ताकि पशु को गलती से फिर वीर्यदान न किया जाए। यदि 21 या 42 दिन

NOT FOR COMMERCIAL USE

के बाद पशु फिर से ऋतु में आए तो पशु को फिर वीर्यदान कराने हेतु कार्ड साथ में लेकर आयें। वीर्यदान केन्द्र/मंडली में भी कार्ड में किए गए अभिलेखन की तरह रजिस्टर में अभिलेखन करना जरूरी है।

वीर्यदान करवाने वाले चिकित्सक को अपने प्रत्येक गॉव में प्राप्य संकरण–संभावित गाय और भैंस की संख्या की सम्पूर्ण जानकारी बनाए रखनी चाहिए। उसे एक लक्ष्य निश्चित करना चाहिए, जिससे वो ज्यादा से ज्यादा पशुओं को वीर्यदान करवा सके। वीर्यदान चिकित्सक के लिए यह एक चुनौती होनी चाहिए कि महत्तम संख्या में वीर्यदान किया जाए और वीर्यदान समय स्ट्रॉ की संख्या न्यूनतम रहे। कार्य के दौरान जो भूलें होती हैं, उनसे भी किसान और वीर्यदानकर्ता बहुत– कुछ सीख सकते हैं। भविश्य में इन त्रुटियों को सुधारकर वीर्यदान के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया जा सकता है।

<u>वीर्यदान कब किया जाए</u>–

गाय और भैंस में वीर्यदान, पशु के ऋतु में आने के मध्य और अन्त भाग में किया जाता है। (12 से 16 घन्टे) यदि पशु ऋतु में नहीं है तो पशु मालिक को जरूरी सूचना दें कि जब पशु ऋतु में न हो तब ऐसे पशु को वीर्यदान कदापि नहीं करना चाहिए। यदि पशु ऋतु में न हो तो ऐसे पशु को वीर्यदान करते हैं तो योनि मुख को हानि हो सकती है। इस प्रकार पशु मालिक के लिए भी पशु के ऋतु में आने का सही समय तय करना कठिन होता है। इसी प्रकार, वीर्यदान का काम करने वाले को पशु मालिक से पशु की सही जानकारी प्राप्त करनी चाहिए और पशु की जॉच करके पता लगाना चाहिए कि वह ऋतु में है या नहीं और वीर्यदान करने का सही समय तय करना चाहिए। यदि वीर्यदान करने वाला सही पद्धति अख्तियार न करते हुए गलत तरीके से वीर्यदान करता है तो गर्भावस्था या गर्भाधान पर बुरा असर होता है। गर्भधारण की दर में कमी और ब्यांत की अल्प संख्या होने से किसानों का कृत्रिम वीर्यदान पद्धति से विश्वास उठ जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–4

वीर्य संकलन और संसाधन

सॉड़ कृत्रिम वीर्यदान मुख्य केन्द्र में रखे जाते हैं। कृत्रिम वीर्यदान केन्द्र का दैनिक कार्य कमानुसार तीन भागों में बॉटा जा सकता है–

(1) वीर्य संकलन

(2) वीर्य निरीक्षण

(3) वीर्य तनुकरण और वीर्यवाहन

वीर्य संकलन

किसी भी कृत्रिम वीर्यदान कार्यकम की सफलता का आधार वीर्य की गुणवत्ता पर आधारित होता है। इसलिए सॉड़ की देखरेख और संभाल एक मुख्य कार्य हैं । वीर्य संकलन की महत्वपूर्ण पद्धतियॉ निम्नलिखित हैं–

(1) कृत्रिम योनि द्वारा

(2) चम्मच जैसे यन्त्र द्वारा

(3) स्पंज द्वारा

(4) मालिश

(5) इलेक्ट्रो–इजेक्युलेटर पद्धति

कृत्रिम योनि द्वारा–

कृत्रिम योनि पद्धति वीर्य संकलन में अत्यधिक प्रचलित और आमतौर पर उपयोग में आने वाली पद्धति है। इसमें एक मजबूत मोटी 12″से 16″ लम्बी और 2½ व्यास वाली रबड़ की एक कड़ी मोटी नली प्रयोग में लायी जाती है। इस नली पर हवा और पानी भरने के लिए एक वाल्व होता है। इस नली से अन्दर पतली और चिकनी रबड़ की लगभग 18″ से 20″ लम्बी और 2½ चौड़ी ट्यूब जिसे

NOT FOR COMMERCIAL USE

इनर लाइनिंग कहते हैं लगायी जाती है। इस ट्यूब को कड़ी मोटी नली के दोनों हिस्से पर चढ़ा दिया जाता है। यह अन्दर वाली ट्यूब के चढ़ाने के बाद नली के बीच गर्म पानी 41 से 43 डिग्री सें0 तथा हवा वाल्व के द्वारा भरी जाती है। गर्म पानी तथा हवा भरने से कृत्रिम योनि में दबाव पैदा होता है। वीर्य संकलन करते समय कृत्रिम योनि का तापमान 40 अंश सेन्टीग्रेड रखा जाता है। इस प्रकार यह कृत्रिम योनि गर्म पानी और हवा के दबाव से प्राकृतिक योनि जैसी लगती है। कृत्रिम योनि के अन्दर थोड़ी वैसलीन लगाई जाती है जिससे आवश्यक चिकनाहट आ जाती है। उसके बाद कृत्रिम योनि के दूसरे सिरे पर रबड़ की शंकुआकार कुप्पी लगायी जाती है। यह उस तरफ लगाई जाती है जहॉ हवा और पानी के लिए वाल्व होता है। इस कोन के एक भाग पर अंकित परख नली लगायी जाती है। इस प्रकार कृत्रिम योनि तैयार करके उसका तापमान देखा जाता है। परख नली और कोन को एक रेक्जीन अपारदर्शक प्लास्टिक की थैली में रखा जाता है जिससे सूर्य का प्रकाश न पड़े। यह थैली तापनिरोधक होनी चाहिए।

सॉड़ को कृत्रिम रूप से उत्तेजित किया जाता है और सॉड़ को डमी भैंस पर चढ़ते वक्त कृत्रिम योनि को सॉड़ के लिंग के समान्तर लाया जाता है। सॉड़ जब भी भैंस पर चढ़ता है, तब उसका लिंग भैंस की योनि में जाने देने की बजाय कृत्रिम योनि में प्रवेश करवा दिया जाता है। कृत्रिम योनि में वीर्यपात करने के लिए गर्मी, दबाव और चिकनापन अनुकूल होने पर सॉड़ वीर्यपात करता है। वीर्यपात होने के बाद कृत्रिम योनि से गर्म पानी निकाल लिया जाता है। पानी बाहर निकालते समय पानी की एक बूँद भी वीर्य में नहीं जानी चाहिए और सूर्य–प्रकाश वीर्य पर नहीं पड़ना चाहिए। एकत्रित वीर्य की परख नली को इसके निरीक्षण के लिए प्रयोगशाला में भेजा जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

शुक्राणुओं के विभिन्न प्रकार

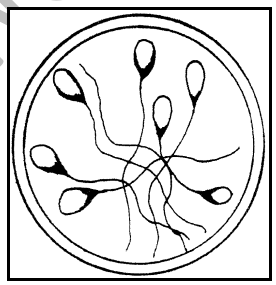

सामान्य

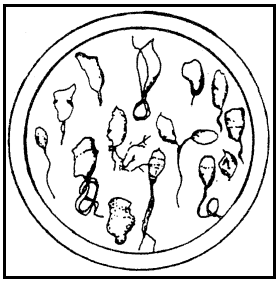

असामान्य

वीर्य निरीक्षण

वीर्य का निरीक्षण निम्नलिखित गुणों से किया जाता है–

ए– वीर्य की मात्रा और सामान्य दिखाव –

अंकित नली में वीर्य की मात्रा देखी जाती है। सामान्य रूप से सॉड़ 5 से 8 मि0लीटर वीर्य और भैंसा (नर) 4 से 5 मि0लीटर वीर्य देता है। जब वीर्य की मात्रा देखी जाती है, तब उस वक्त वीर्य का रंग भी खाली ऑख से देखा जाता है। अनुभवी व्यक्ति द्वारा किया हुआ वीर्य निरीक्षण फायदेमन्द होता है। वीर्य के नमूने का रंग और घनता से वीर्य की गुणवत्ता का अंदाजा लगा सकते हैं।

बी– वीर्य की सक्रियता –

स्वच्छ–शुद्ध वीर्य की गुणवत्ता माइक्रोस्कोप द्वारा तय करने में, यह पद्धति बहुत आसान है किन्तु आजकल कई केन्द्रों द्वारा वीर्य की सक्रियता का निरीक्षण नहीं किया जाता। यदि वीर्य अधिक गाढ़ा है तो उसमें घूमने वाली (लहर जैसी) गति देखी जाती है।

सी– वीर्य की गति –

वीर्य की 1:1 के अनुपात से तनुकरण करके वीर्य की गति देखी जाती है। तनुकृत वीर्य की एक बूँद एक हल्की गर्म कॉच की पट्टी पर ली जाती है। इसे कॉच की एक पतली पट्टी पर सावधानीपूर्वक ढ़ँककर, कम शक्ति वाले माइक्रोस्कोप में देखा जाता है। इसमें जिन्दा और गतिशील शुक्राणु के प्रतिशत को ऑका जाता है।

डी – शुक्राणु की संख्या –

शुक्राणु की संख्या दो विधियों से मापी जा सकती है–

1. कैलोरी मीट्रिक विधि– इससे मोटे रूप से शुक्राणुओं को ऑका जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

2. हीमोसाइटोमीटर के द्वारा शुक्राणुओं की मात्रा शुद्धता से मापी जा सकती है और वीर्य के तनुकरण का प्रतिशत बतलाया जा सकता है। वीर्य की 1:200 के अनुपात में तनु करके हीमोसाइटोमीटर की पट्टी पर कुछ बूँदें गिरायी जाती हैं। हीमोसाइटोमीटर को कॉच की पतली पट्टी में ढ़ँक कर सूक्ष्मदर्शी से देखा जाता है। पॉच बड़े वर्गों के अन्दर की शुक्राणुओं की गिनती की जाती है। इस गिनती को निश्चित समीकरण से हल करने पर एक घन से0मी0 में शुक्राणुओं की संख्या मालूम हो जाती है।

ई– असामान्य शुक्राणुओं की संख्या –

वीर्य के नमूने की संरचना का वीर्यदान केन्द्र में निश्चित समयान्तर पर शुक्राणुओं की असामान्यता जानने के लिए अभ्यास किया जाता है। शुक्राणुओं की संरचना से सम्बन्धित असामान्यता 15–20 % से ज्यादा नहीं होनी चाहिए।

एफ– जिन्दा और मरे हुए शुक्राणुओं की मात्रा –

इससे वीर्य में जिन्दा और मृत शुक्राणुओं की संख्या मालूम की जाती है। अगर मृत शुक्राणुओं की संख्या ज्यादा है तो वीर्य को कम तनुकृत करते हैं। मृत शुक्राणुओं की संख्या ज्यादा (25 % से अधिक) होने पर वीर्य को व्यवहार में नहीं लाना चाहिए।

जी– वीर्य का माध्यम (**pH**)

वीर्य की अम्लता या खारापन को निश्चित करने का सूत्र pH नाम से जाना जाता है। वीर्य का माध्यम साधारण तौर पर अम्लीय और pH मापक्रम 6.6 से 6.8 तक होता है। यदि pH का माप 7 से अधिक हो तो उसे व्यवहार में नहीं लाना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

संसाधन और तनुकरण

द्रावण और वीर्य की मात्रा में बढ़ोत्तरी –

प्रयोगशाला में वीर्य का निरीक्षण करने के बाद उसकी श्रेणी के अनुपात में वीर्य में तैयार किया हुआ द्रावण डालकर वीर्य की मात्रा बढ़ायी जाती है, जिससे ज्यादा से ज्यादा पशु को वीर्यदान किया जा सके। द्रावण केवल वीर्य की मात्रा ही नहीं बढ़ाता, बल्कि वीर्य को ज्यादा समय जीवित रखता है, शुक्राणुओं को शक्ति और पोषण देता है और वीर्य को ठन्ड के आघात से बचाता है।

वीर्य की शीतकरण

वीर्य के तनुकरण के बाद, 14% ग्लिसरीन, इसमें मिलाया जाता है। बाद में कमरे के तापमान पर उसे स्ट्रॉ में भरा जाता है। 4–5 घन्टे के तक 5^0 से0 तापमान पर ठन्डा किया जाता है। यह वीर्य युक्त स्ट्रॉ वायुरूप नाइट्रोजन में 150^0 से0 तापमान पर 10 मिनट तक ठन्डा किया जाता है। अन्त में द्रव नाइट्रोजन में -196^0 से0 तापमान पर ठन्डा किया जाता है। द्रव नाइट्रोजन में वीर्य अधिक समय तक जीवित रहता है। द्रव नाइट्रोजन में रखा गया वीर्य अलग–अलग केन्द्र तक द्रव नाइट्रोजन कन्टेनर में परिवहन किया जाता है।

तरल/शीत वीर्य

प्रवाही स्वरूप में द्रवित वीर्य को बर्फ या रेफ्रिजरेटर में ठन्डा किया जाता है, इसे तरल या शीत वीर्य कहा जाता है। अलग–अलग सोसायटी या वीर्यदान केन्द्र तक परिवहन हेतु वीर्य को स्ट्रॉ या छोटी प्लास्टिक की बोतल में भरकर बर्फ–भरे थर्मोकोल बॉक्स में रखा जाता है। आजकल सहकारी समितियों में तरल वीर्य का उपयोग नहीं होता।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–5

जमा वीर्य **(Frozen Semen)**

जमा वीर्य

जब वीर्य को बहुत कम तापमान पर जमा दिया जाये तो उसे जमा या ' डीप फ्रीज्ड' वीर्य कहते हैं। इसके लिए तरल नाइट्रोजन का उपयोग होता है जिसे दुनिया भर में प्रशीतक के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है। तरल नाइट्रोजन का तापमान ऋण 196^0 से0 होने के कारण यह वीर्य जमाने के लिए बहुत उपयुक्त है। इस प्रक्रिया में शुक्राणु की चयापचय प्रक्रिया शून्य हो जाती है ताकि शुक्राणु लम्बे समय तक जीवित रहें।

जमा वीर्य निम्नलिखित पैकिंग में उपलब्ध हैं–

(1) 1 मिली0 की शीशी में (2) स्ट्रॉ में–फ्रेंच मीडियम (0.5 मिली0), फ्रेंच मिनी स्ट्रॉ (0.25 मिली0) और जर्मन मिनीटब (0.25) हर प्रकार की पैकिंग में, हर स्ट्रॉ में शुक्राणुओं की संख्या लगभग 20 से 25 मिलियन (2 से 2.5 करोड़) रखी जाती है।

पिघलाना **(Thawing)**

उपयोग से पूर्व जब जमे वीर्य को तरल अवस्था में लाया जाता है तो पिघलाना (Thawing) कहते हैं। जमाने की तकनीक के जरिये शुक्राणु की चयापचय प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है और यह तरल नाइट्रोजन में संरक्षित रखने पर अच्छी अवस्था में बना रहता है। अण्डाशय में गर्भाधान करने के लिए शुक्राणुओं को गतिशील होना चाहिए इसलिए जिस प्रक्रिया से शुक्राणुओं को असक्रिय अवस्था से गतिशील अवस्था में वापस लाया जाता है उसे पिघलाना (Thawing)कहते हैं।

पिघलाने की यह प्रक्रिया गर्म पानी में की जाती है। इसके लिए पानी का तापमान सही होना चाहिए और स्ट्रॉ को एक विशेष समय तक गर्म पानी में रखना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

सॉड़ के वीर्य पिघलाने के लिए पानी का तापमान 36^0 सें0 होना चाहिए और स्ट्रॉ को 15 सेकेन्ड़ तक पानी में रखना चाहिए। भैंसे के वीर्य के लिए वैज्ञानिक लोग पानी का तापमान 38^0 सें0 रखने और 15 सेकेन्ड समय की सिफारिश करते हैं। पानी का तापमान सही ढंग से नापने के लिए थर्मामीटर का उपयोग करना चाहिए।

कई वीर्यदानकर्ता यह नहीं जानते कि पिघलाने की प्रक्रिया ठीक न होने से वीर्य की गुणवत्ता प्रभावित हो जाती है। कई बार वे कहते हैं कि पिघलाना सामान्य पानी में हो सकता है और पिघलाने के बाद स्ट्रॉ को जेब में रख कर दूर दराज़ ले जाकर वीर्यदान किया जा सकता है लेकिन ऐसी हालत में सफलता का प्रतिशत क्या है?

ऊपर बतायी गयी पिघलाने की प्रकिया सबसे वैज्ञानिक प्रकिया है और बताये गए नियमों के अनुसार ही संसेचन करना चाहिए।

ग्रीवा में संसेचन पिचकारी डालने में मुश्किलें

योनि की पृष्ठ तहें संसेचन पिचकारी की राह में बाधा डाल रही हैं

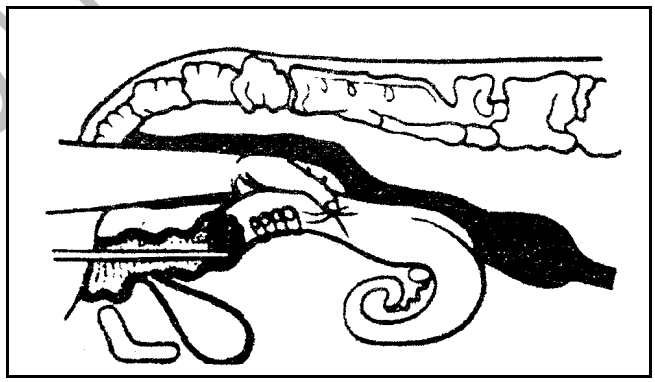

योनि की उदर तहें संसेचन पिचकारी की राह में बाधा डाल रही हैं

NOT FOR COMMERCIAL USE

संसेचन के तरीके

जिस प्रक्रिया से कामातुर गाय या भैंस के प्रजनन अंग में वीर्य को कृत्रिम ढंग से डाला जाता है उसे कृत्रिम संसेचन (Artificial Insemination) कहा जाता है। कृत्रिम संसेचन के दो तरीके हैं जिसमें मलाशय – योनि (Racto-Veginal) तरीका सबसे वैज्ञानिक और प्रचलित है –

1. स्पेकुलम (वीक्षण यन्त्र) विधि
2. मलाशय– योनि विधि

मलाशय – योनि विधि –

1 संसेचन कराने वाली गाय के पिछले प्रसव, कामातुर होने/संसेचन आदि जैसे पूर्व प्रजनन सम्बन्धित इतिहास की जानकारी लें।
2 हल्के से अपना एक हाथ चिकना करके स्क्रू की तरह मलाशय के अन्दर डालें। वहॉ से पूरा गोबर निकाल दें।
3 अगर गाय कामातुर है तो उसे काबू में करें और योनि को साफ करें।
4 एक स्ट्रॉ का पिघलायें। ए0आई0 गन तैयार करें।
5 अपना बायॉ हाथ पशु के मलाशय में डालें और ग्रीवा को हल्के से पकड़ें।
6 ए0आई0 गन योनि में डालकर मध्य–ग्रीवा अवस्था में ले जायें।
7 गन की नोक सही स्थान पर पहुॅचे तो वीर्य छोड़ दें और गन बाहर निकालें।

मलाशय–योनि संसेचन के लाभ निम्नलिखित हैं –

1. प्रजनन की छुआ–छूत वाली बीमारियों को रोका जा सकता है।
2. संसेचन के समय प्रजनन अंगों का निरीक्षण किया जा सकता है।
3. अंगों में किसी भी असामान्यता का पता लगाया जा सकता है।
4. गर्भधारण की दर को बढ़ाया जा सकता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

मलाशय तरीके से संसेचन के समय निम्नलिखित का ध्यान रखना चाहिए –

1. हमेशा गन को आड़ी दिशा में 45^0 के कोण पर डालें, फिर सीधा कर आगे बढ़ायें।
2. हमेशा घ्यान दें कि योनि की सतहों और ग्रीवा को ए0आई0 गन की नोक से चोट न लगे।
3. योनि के अन्दर की तहों के कारण ए0आई0 गन के जाने में कठिनाई हो सकती है। ग्रीवा को पकड़कर आगे खींचे ताकि ये तहें सीधी हो जायें और ए0आई0 गन आसानी से अन्दर चली जाये।
4. अगर पशु का मलाशय सामान्य से बड़ा हो तो गन डालते समय उसके पिछले भाग पर दबाव डालिए या उसकी नाक दबाइये।
5. ध्यान रखिए कि गन की नोंक मुत्राशय में न जाएं।
6. ए0आई0 गन को मध्य ग्रीवा अवस्था में लाने के बाद ही वीर्य छोड़ना चाहिए।
7. गर्भाशय में गन डालते समय ग्रीवा को कसकर मत पकड़िए अन्यथा गर्भाशय बन्द हो जायेगा।

NOT FOR COMMERCIAL USE

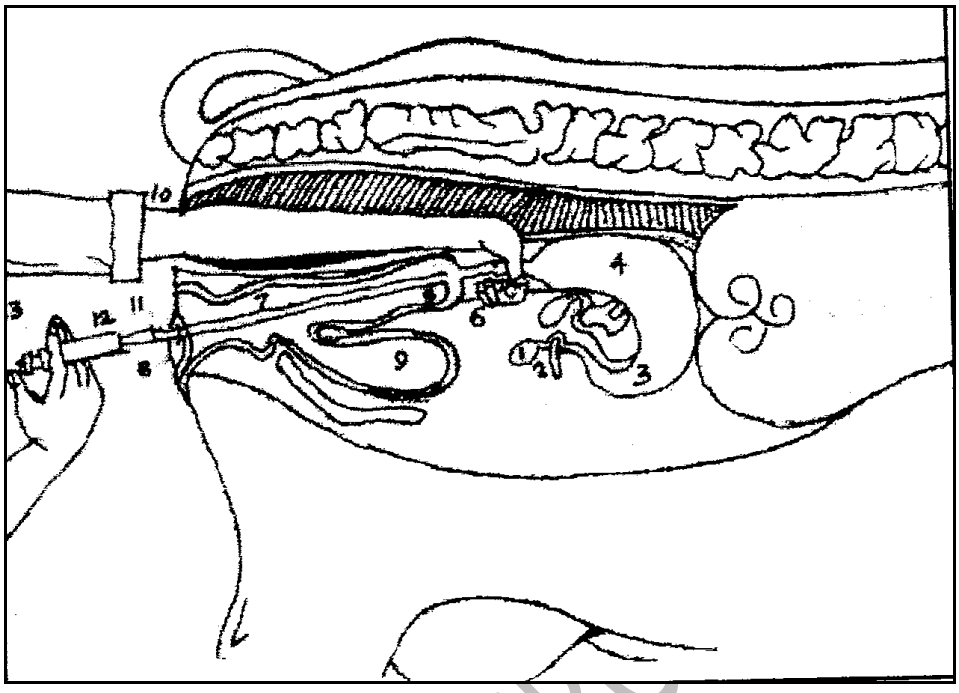

1. अण्डाशय
2. डिम्बवाही नली
3. गर्भाशय के श्रंग
4. गर्भाशय
5. ओएस ग्रीवा
6. मध्य ग्रीवा क्षेत्र
7. योनि
8. योनिद्वार
9. मूत्राशय
10. मलद्वार
11. संसेचक पिचकारी
12. रबर का जोड़
13. सिरिंज

NOT FOR COMMERCIAL

गर्भाशय में संसेचन का स्थान

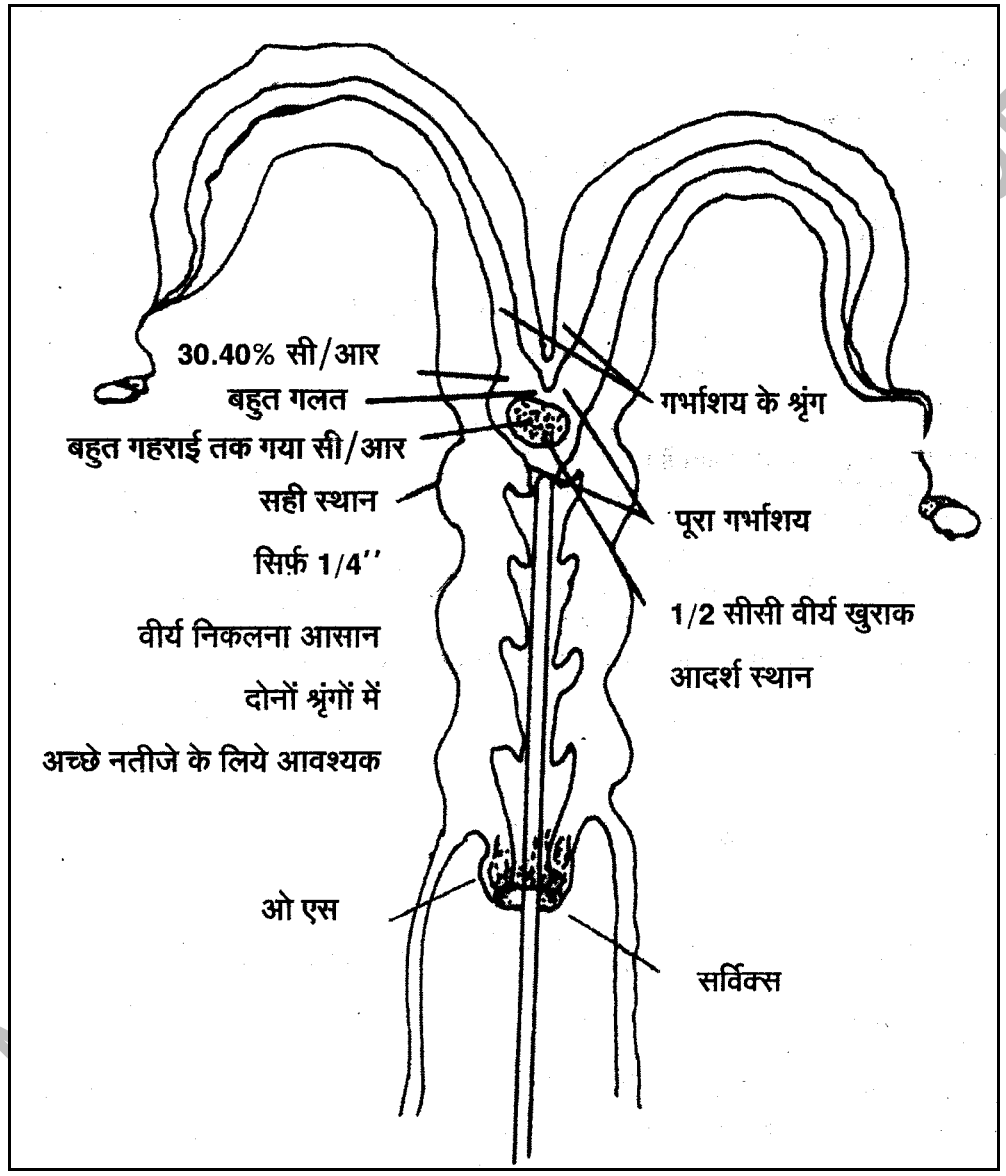

जमे वीर्य के लाभ

1. सामान्यतः तरल वीर्य का उपयोग 1 से 2 दिन तक किया जा सकता है जबकि जमे वीर्य का उपयोग लम्बे समय के बाद भी हो सकता है। इस प्रकार कोई बर्बादी नहीं होती।
2. इसे हमेशा के लिए तरल नाइट्रोजन में सुरक्षित रखा जा सकता है। इस प्रकार सॉड़ के मरने के बाद भी उसके बछड़े पैदा किए जा सकते हैं।
3. इसे कम खर्च में किसी भी स्थान पर ले जाना सम्भव है।
4. चुने गयें सॉड़ के जमे वीर्य से दुनिया के किसी भी कोने में गायों को गर्भवती किया जा सकता है।

जमे वीर्य को सॅभालने तथा ए0आई0 गन तैयार करने का तरीका

1. जिस कनस्तर में स्ट्रॉ रखे हैं उसे कन्टेनर के गले के ऊपर नहीं रखना चाहिए या कन्टेनर के बाहर नहीं निकालना चाहिए।
2. जमे वीर्य को पिघलाने के लिए उसे 36.38^0 से गर्म पानी में 15 सेकेंड़ रखना चाहिए, अच्छा होगा यदि थर्मस के अन्दर वीर्य रखा जाए।
3. अगर कोई बीमारी फैली हो तो पिघलाने वाले पानी में रोगाणुनाशक दवा की कुछ बूँदें डालें।
4. हर स्ट्रॉ को अलग–अलग पिघलायें।
5. गन को जोर से रगड़ कर या सर्दियों में कोट के अन्दर रखकर शरीर के तापमान तक लाइये। यह प्रक्रिया थर्मस के अन्दर की जाए। फिर पिघलाने के बाद स्ट्रॉ को जल्दी से सुखाकर गन में फिट कर दीजिए।

ए0आई0 गन तैयार करते समय की सावधानियॉ

1. एक बार में एक से अधिक स्ट्रॉ न पिघलायें।
2. स्ट्रॉ पिघलाने के बाद उसका तापमान कम न होने दें।
3. लैबोरेटरी सील निकालने से पहले स्ट्रॉ को साफ कपड़े या नैपकिन से उसे अच्छी तरह सुखा दें।
4. स्ट्रॉ को सीधा पकड़ें (रूई का प्लग नीचे की ओर रखते हुए) फिर उसके लैब प्लग को समकोण से काटें।
5. टावरण को सही ढंग से फिट करें वर्ना वीर्य नीचे बह सकता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

जमे वीर्य की देखभाल

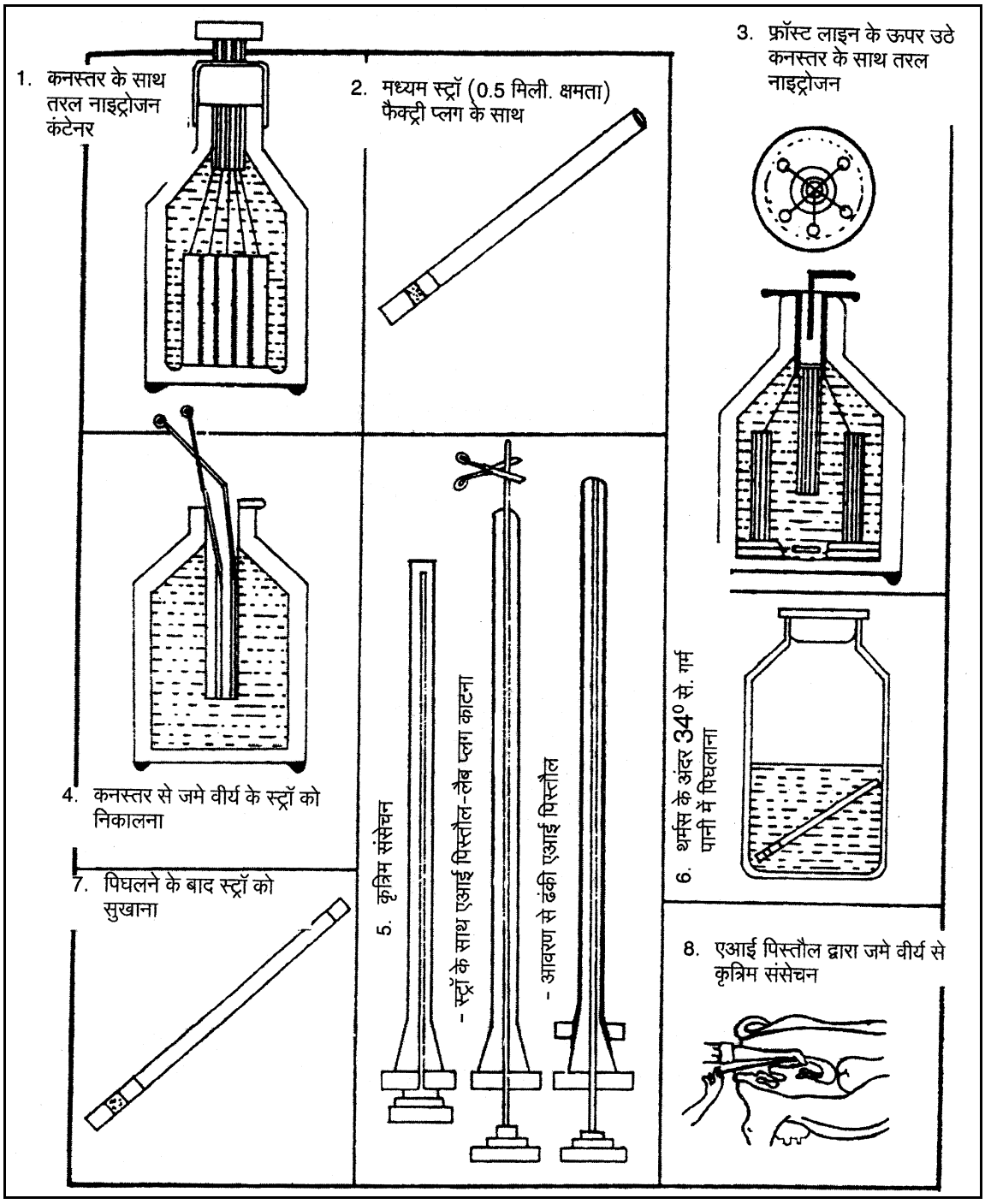
1. कनस्तर के साथ तरल नाइट्रोजन कंटेनर
2. मध्यम स्ट्रॉ (0.5 मिली. क्षमता) फैक्ट्री प्लग के साथ
3. फ्रॉस्ट लाइन के ऊपर उठे कनस्तर के साथ तरल नाइट्रोजन
4. कनस्तर से जमे वीर्य के स्ट्रॉ को निकालना
5. कृत्रिम संसेचन
- स्ट्रॉ के साथ एआई पिस्तौल-लैब प्लग काटना
- आवरण से ढंकी एआई पिस्तौल
6. थर्मस के अंदर 34° से. गर्म पानी में पिघलाना
7. पिघलने के बाद स्ट्रॉ को सुखाना
8. एआई पिस्तौल द्वारा जमे वीर्य से कृत्रिम संसेचन

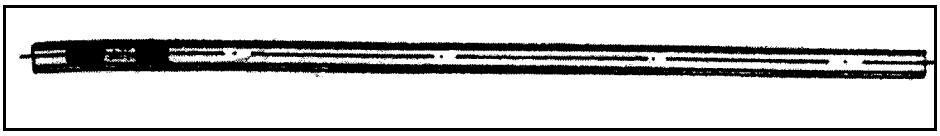

सही स्थान पर लगे पॉलीविनाइल प्लग के साथ स्ट्रॉ

भरी हुई " फ्रेंच स्ट्रॉ गन"

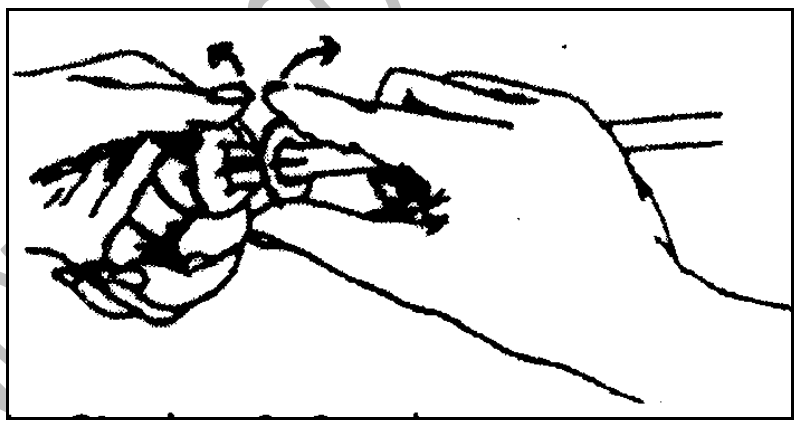

'ओ' रिंग से भरी गन बन्द करना

स्ट्रॉ प्रणाली के उपयोग के लिए उपकरण। स्ट्रॉ, फ्रेंच स्ट्रॉ गन और भरी गन को बन्द करने के लिए 'ओ' रिंग

NON-COMMERCIAL USE

जमे वीर्य को संभालने के लिए आवश्यक सावधानियॉ

सफल गर्भधारण के लिए जमे वीर्य की गुणवत्ता बनाये रखने की खातिर उसे पूरी सावधानी के साथ संभालना आवश्यक है। वीर्य को संभालने में निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए–

1. वीर्य रखे कनस्तर को कन्टेनर के गले पर बनी लाइन से ऊपर न उठायें।
2. स्ट्रॉ को 10 सेकेन्ड़ से ज्यादा, उच्च तापमान में न रखें।
3. स्ट्रॉ को बाहरी वातावरण में कम से कम बार निकालें।
4. स्ट्रॉ को फील्ड कन्टेनर से निकाल कर पिघलाने वाले पानी में 5 सेकेन्ड़ के अन्दर डाल दें।
5. पिघलाने वाले पानी में हर बार ताजा, स्वच्छ पानी डालें।
6. स्ट्रॉ पिघलते समय उसे हिलाये–डुलायें या छुयें नहीं।
7. स्ट्रॉ पिघलने के बाद 5 मिनट तक उसका उपयोग करलें।
8. काटने से पहले स्ट्रॉ को पूरी तरह सुखा दें।
9. लैबोरेटरी प्लग निकालने के लिए स्ट्रॉ को काट दें।
10. वीर्य को मध्य ग्रीवा क्षेत्र में डालें।
11. स्ट्रॉ को फेंकने से पहले उस पर लिखे विवरण देख लें।
12. जमे वीर्य के सही मूल्यांकन के लिए कई कार्य करने पड़ते हैं जो सही प्रयोगशाला में भली–भॉति प्रशिक्षित कर्मचारी द्वारा ही सम्पादित होने चाहिए।
13. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को धूप में न रखें।
14. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर के ढक्कन को खुला या ढ़ीला न रखें। ऐसा करने से तरल नाइट्रोजन का वाष्पीकरण कम होगा।
15. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को टेढ़ा न रखें।
16. समय–समय पर तरल नाइट्रोजन के स्तर की जॉच करें ताकि स्ट्रॉ हमेशा उसमें डूबे रहें।
17. तरल नाइट्रोजन के उपयोग के समय दस्ताने और चिमटी इस्तेमाल करें।
18. अगर कोई दिक्कत हो तो इस क्षेत्र के अनुभवी व्यक्ति से सलाह लें।

NOT FOR COMMERCIAL USE

जमे वीर्य की देखभाल में सामान्य गलतियॉ

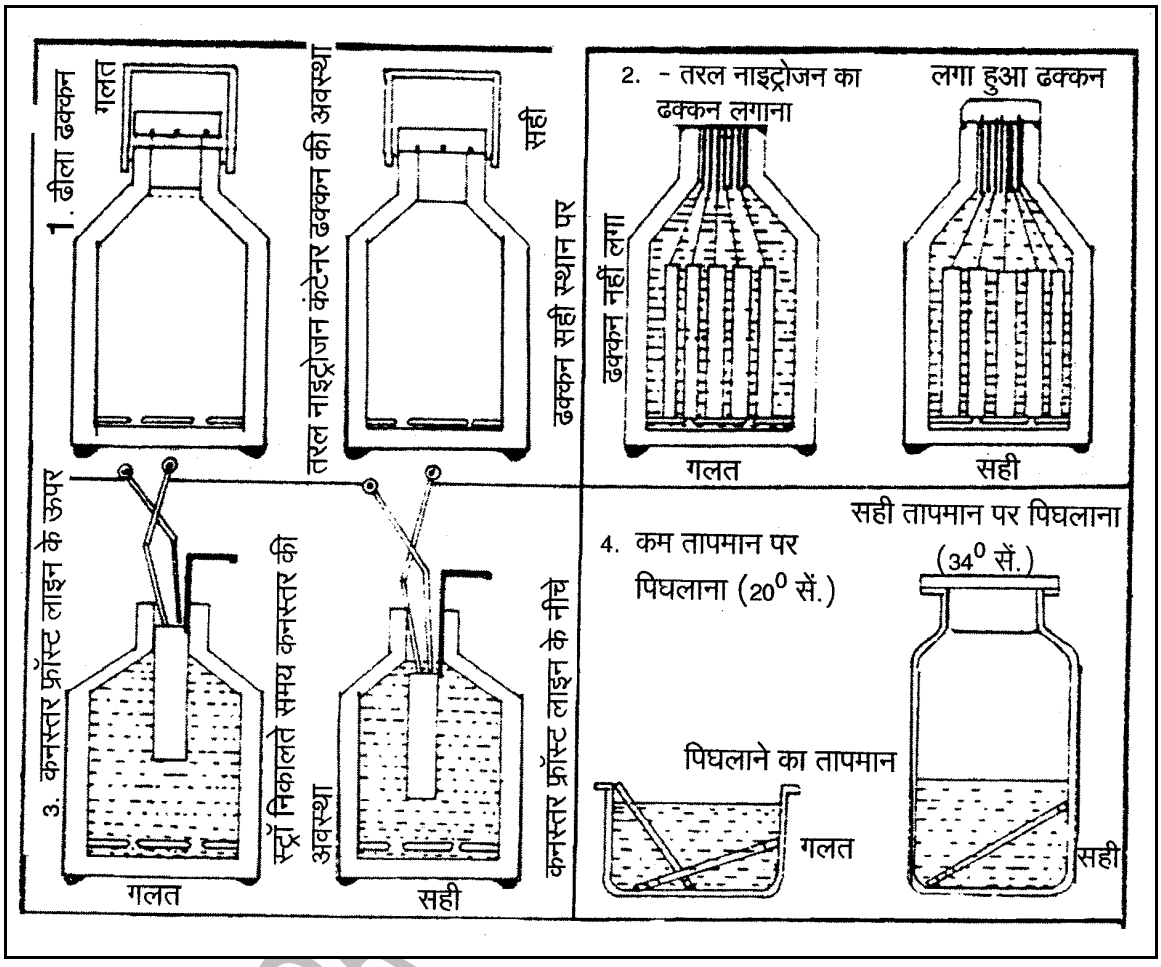

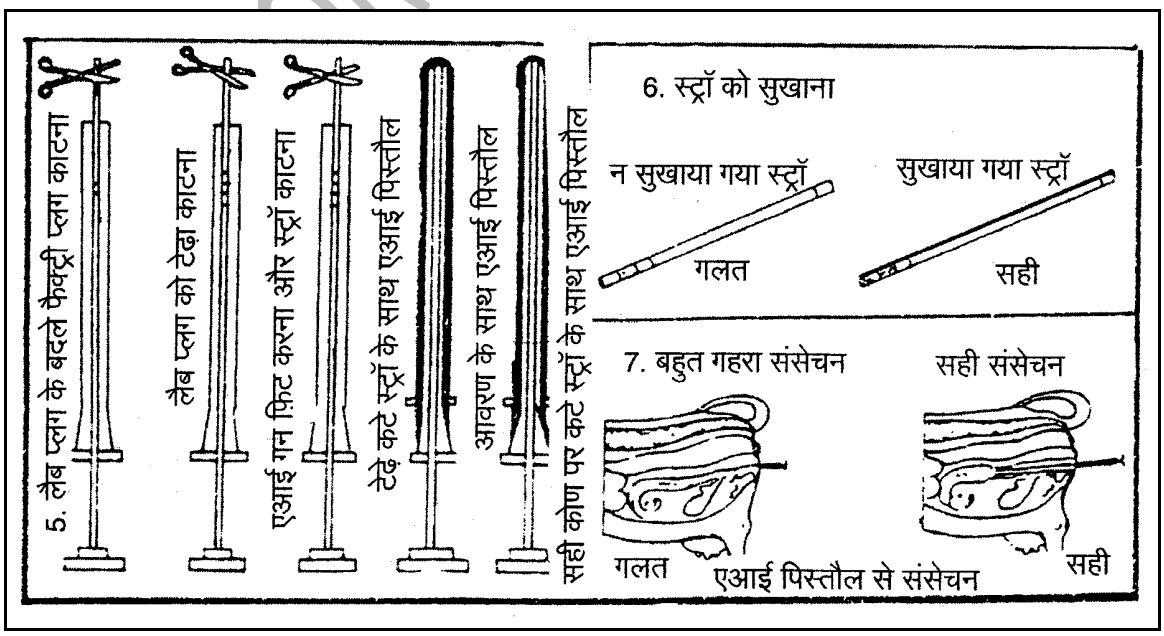

वीर्य सम्भालने में सामान्य सावधानियां

जमे वीर्य से संसेचन के लिए ए0आई0 कार्यकर्ताओं/ संसेचकों को वीर्य की खुराकों के अलावा कुछ उपकरणों की आवश्यकता होती है जो उन्हें वीर्य की खुराक सम्भालने में मदद करते हैं। ये उपकरण हैं लम्बी चिमटी (20 से 22 सेंटीमीटर), थर्मामीटर (0से 50 सेंटीमीटर), सीधी कैंची, पिघलाने वाली किडनी ट्रे, पानी गर्म करने के उपकरण, छोटा कपड़ा, एक ऐसा छोटा बॉक्स जिसमें ए0आई0 पिस्तौल और आवरणों के साथ उपरोक्त चीज़ें भी रखी जा सकें। कई बार देखा गया है कि इनमें से कुछ उपकरण न होने के कारण ए0आई0 कार्यकर्ता वीर्य को ठीक से सम्भाल नहीं पाते। ऐसी बातें भी देखी गयीं हैं कि बार–बार के इस्तेमाल से ये उपकरण खराब हो गये हैं लेकिनए0आई0 कार्यकर्ता इन्हें बदलने की कोशिश नहीं करते। अगर उपकरण ठीक नही होंगे तो गर्भधारण की दर 15 से 20 प्रतिशत घट जायेगी।

तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर की देखभाल

जमे वीर्य के स्ट्रॉ को तरल नाइट्रोजन में रखने के लिए खास तरह के कन्टेनर की आवश्यकता होती है। ये कन्टेनर काफी नाजुक होते हैं और इन्हें विशेष तरह से सम्भालने और देखभाल की जरूरत होती है। तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को सम्भालते समय निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए–

1. स्ट्रॉ निकालते ही कन्टेनर का ढक्कन तुरन्त बन्द कर देना चाहिए।
2. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर पर सीधी धूप नहीं पड़नी चाहिए।
3. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को ऐसी जगह न रखें जहॉ हवा में नमी ज्यादा हों। कन्टेनर को काठ के डिब्बे में रखिए। घिसाव/ क्षति से बचने के लिए कन्टेनर के तल में और चारों ओर कोई नर्म चीज़ रखिए। अगर उपयुक्त डिब्बा न मिले तो कन्टेनर सूती कपड़े में लपेट दें।
4. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को नियमित रूप से स्वच्छ कपड़े से साफ करें और उस पर धूल न जमने दें।
5. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को आड़ा या उल्टा न रखें।
6. तरल नाइट्रोजन के कन्टेनर को कील मार कर या वेल्ड कर बन्द न करें।
7. कन्टेनर में तरल नाइट्रोजन का स्तर सही रखें ताकि स्ट्रॉ उसमें डूबे रहें। अगर तरल नाइट्रोजन का स्तर घट गया तो स्ट्रॉ खराब हो जायेंगे। स्तर को समय–समय पर जांचते रहें और जब भी

NOT FOR COMMERCIAL USE

वह कम हो जाय तो तुरन्त उसे भरवा लें। छड़ी से तरल नाइट्रोजन का स्तर समय–समय पर नापते रहें।

तरल नाइट्रोजन का कन्टेनर

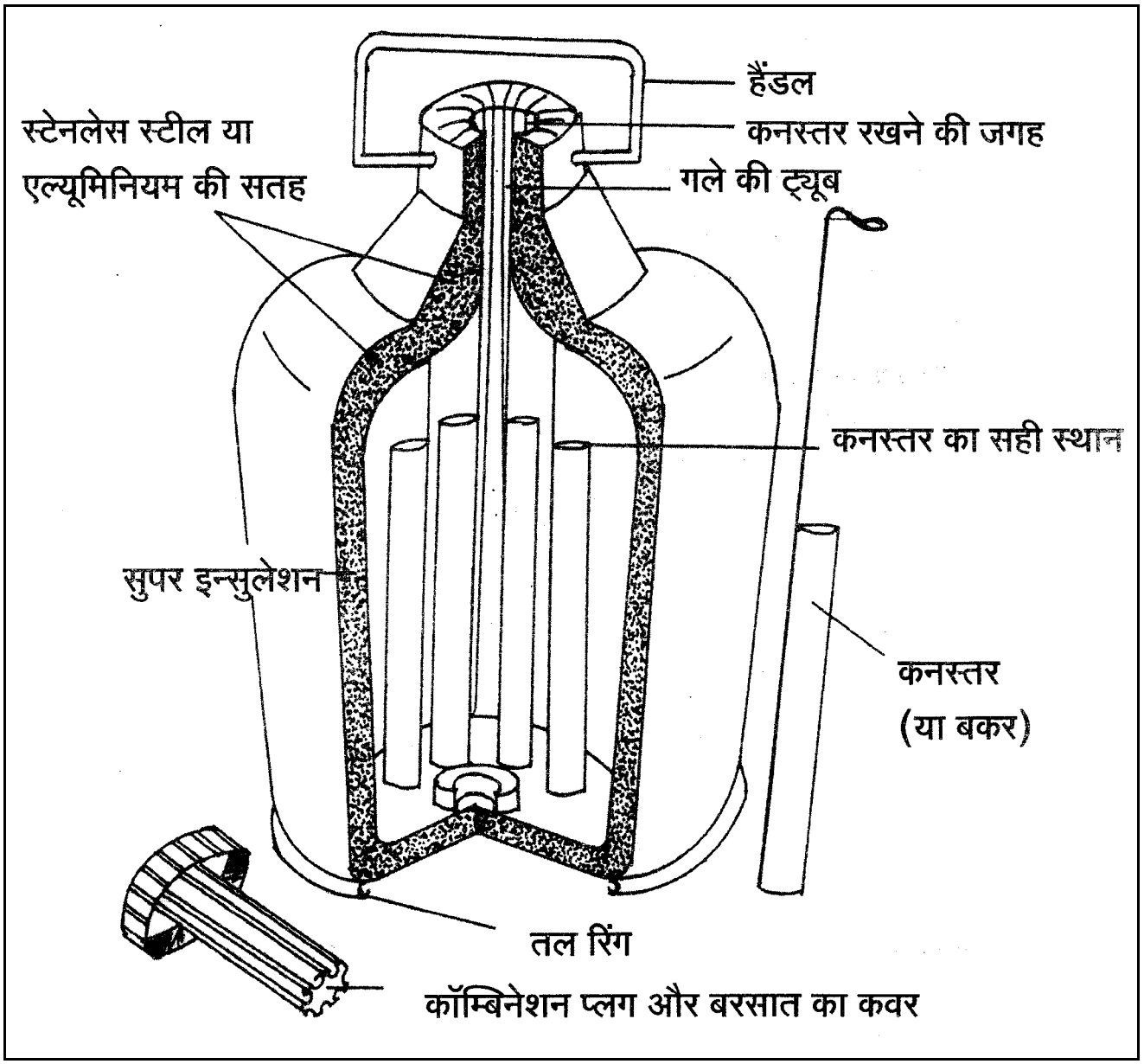

अध्याय–6

प्रजनन हार्मोन

प्रजनन के लिए हार्मोन

हार्मोन ऐसे रासायनिक पदार्थ हैं जो नलिका रहित ग्रन्थियों द्वारा निर्मित होते हैं और खून से मिलकर सिर्फ लक्षित ग्रन्थियों/अंगों पर काम करते है। प्रजनन करान वाले हार्मोन का निर्माण पीयूष ग्रन्थियों, अण्डाशय/अण्ड–ग्रन्थियों द्वारा किया जाता है।

मादा प्रजनन प्रक्रिया के लिए हार्मोन

मादा प्रजनन प्रक्रिया के लिए हार्मोन स्राव के दो स्रोत हैं–

(1) पीयूष ग्रन्थि (2) अण्डाशय

पीयूष ग्रन्थि मस्तिष्क के नीचे स्थित है। इस ग्रन्थि से कई हार्मोन निर्मित होते हैं जो पशु शरीर के कई कार्यकलापों का नियन्त्रण करते हैं। इसके दो बराबर भाग हैं। आगे वाले को अग्र पीयूष ग्रन्थि तथा पिछले वाले भाग को पार्श्व पीयूष ग्रन्थि कहते हैं।

(ए) अग्र पीयूष ग्रन्थि – यह तीन ऐसे हार्मोन बनाती है जो प्रजनन प्रणाली के कार्यकलाप में मदद करते हैं। इन हार्मोनों को 'गोनाडोट्रॉपिक हार्मोन' कहते हैं। हार्मोन निकलने का असर मौसम, प्रकाश और पर्यावरण पर होता है। अगर एक हार्मोन का निर्माण बढ़ जाय तो दूसरे का स्राव अपने आप बन्द हो जाता है इसे फीड बैक मेकैनिज़्म कहते हैं। अग्र पीयूष ग्रन्थि के हार्मोन हैं एफ0एस0एच0, एल0एच0 और प्रोलैक्टिन।

एफ0एस0एच0 (Follicular Stimulating Harmone) – यह हार्मोन मादा पशुओं के अण्डाशय में ग्रेफियान पुटिका (Graphian Follicle) का विकास करता है। यह हार्मोन ऐसे ग्राफियान पुटिका के विकास में मदद करता है जिसमें अण्डाणु (Ova) होते हैं। ग्राफियान पुटिका से इस्ट्रोजन के निर्माण के लिए एफ0एस0एच0 और एच0एल0 की आवश्यकता होती है। मादा पशुओं में इस्ट्रोजन के अधिक स्राव से एफ0एस0एच0 का निर्माण कम हो जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

एल0एच0 (**Leutinizing Harmone**) – एल0एच0 का निर्माण अग्र पीयूश ग्रन्थि द्वारा होता है और यह अण्डाणु को परिपक्व करता है। इसका मुख्य काम है अण्डाशय से अण्डाणु को अलग करना। एल0एच0 के प्रभाव से जब पुटिका की सतह कमजोर हो जाती है तो अण्डाणु निकलते हैं। यह हार्मोन भंग पुटिका के स्थान पर सी0एल0 (कॉर्पस लूटेयम) बनाता है। नर पशुओं में एल0एच0 अण्डकोश की लेडिग कोशिकाओं को उत्तेजित कर टेस्टोस्टेरॉन बनाता है।

प्रोलैक्टिन **(Prolactin Harmone)** – सीधे स्तनीय ग्रन्थियों का निर्माण नहीं करता लेकिन इस हार्मोन से दूध का निर्माण की क्षमता आती है, इसलिए इसे प्रोलैक्टिन कहते हैं। कुछ हद तक अण्डाशय के कॉर्पस ल्यूटियम से प्रोजेस्टेरॉन के निर्माण के लिए प्रोलैक्टिन उपयोगी होता है।

NON-COMMERCIAL USE

गाय के प्रजनन अंगों से विभिन्न हार्मोन का सम्बन्ध

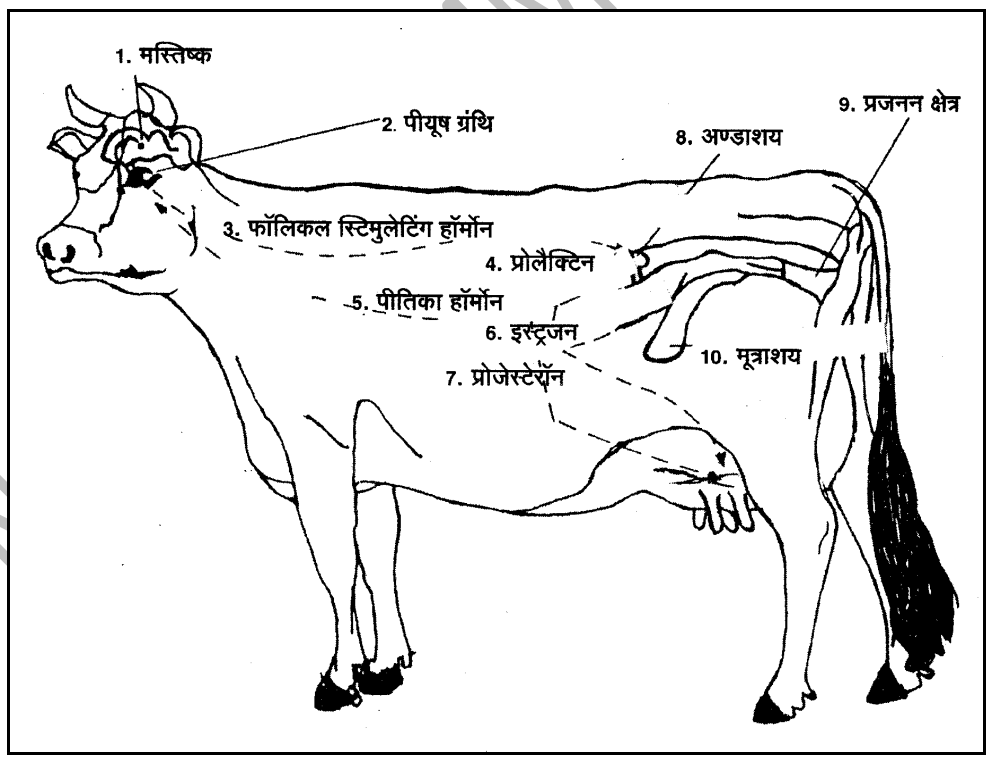

(बी) पार्श्व पीयूष ग्रन्थि – यह ऑक्सीटॉसिन (Oxytocin) बनाती है। इसका मुख्य प्रभाव गर्भाशय की अनैच्छिक मॉसपेशियों तथा थन की कोशिकाओं पर होता है। ऑक्सीटॉसिन का अर्थ है 'जल्द जन्म'। जन्म के समय इस हार्मोन का प्रभाव 6 से 8 मिनट तक रहता है। जन्म के समय प्रजनन द्वार को खोलने और दूध नीचे करने का काम इसके द्वारा होता है।

अण्डाशय के हार्मोन– इस्ट्रोजन, प्रोजेस्ट्रान और रिलैक्सिन हार्मोन पशुओं के अण्डाशय में बनते हैं।

इस्ट्रोजन अण्डाशय में विकसित हो रही ग्रेफियन पुटिका के थिका इंटर्ना से निर्मित होता है। यह हार्मोन केवल एफ0एस0एच0 और एल0एच0 के प्रभाव से बनता है। यह विभिन्न समय पर विभिन्न मात्रा में अधिवृक्क ग्रन्थि, प्लेसेंटा और कॉर्पस ल्यूटियम द्वारा भी निर्मित होता है।

इस्ट्रोजन की क्रियाएं –

1. गर्भाशय की वृद्धि में मदद करता है।
2. गर्भाशय के सिकुड़न की दर और विस्तार को बढ़ाकर उसकी सिकुड़न क्षमता को बढ़ाता है।
3. योनि के एपिथीलियम की वृद्धि में मदद करता है।
4. अण्डवाहिनी की वृद्धि और उसकी मॉसपेशी की गतिविधियों में मदद करता है।
5. स्तनीय ग्रन्थि की वृद्धि और विकास में मदद करता है।
6. कामातुर बनाता है।

प्रोजेस्ट्रान की क्रियाएं –

1. प्रोजेस्ट्रान गर्भाशय की आन्तरिक सतह–ग्रन्थियों को सक्रिय कर 'गर्भाशय दूध' का निर्माण करता है। गर्भाशय को जोड़ने के लिए यह दूध गर्भ को पोषित करता है।
2. भ्रूण के गिर्द सतह बनाता है और गर्भाशय के कॉटीलीडन से उसे जोड़ता है।
3. गर्भाशय की आन्तरिक सतहों का हिलना–डुलना रोकता है और भ्रूण आरोपण में मदद करता है।
4. मादा पशुओं में मातृत्व व्यवहार बनाने में मदद करता है।
5. गर्भावस्था के दौरान भ्रूण को संभालता और उसकी रक्षा करता है।
6. कॉर्पस ल्यूटियम का विकास करता है।
7. गर्भवती पशु की चयापचय दर बढ़ाता है।

रिलैक्सिन कॉर्पस ल्यूटियम और प्लैसेंटा द्वारा निर्मित होता है। चूँकि गर्भवती मादा के गर्भाशय की मॉसपेशियॉ हमेशा खिंची रहती हैं इसलिए यह उनके तनाव को कम करता है। जन्म के समय यह

NOT FOR COMMERCIAL USE

सिम्फिसियस श्रेणी जोड़ को ढ़ीला कर गर्भ की राह को चौड़ा कर देता है। रिलैक्सिन, इस्ट्रोजन और ऑक्सिटोसिन के प्रभाव से प्रसव होता है।

नर प्रजनन प्रणाली के हार्मोन

पीयूष ग्रन्थि के हार्मोन – एफ0एस0एच0 थोड़ी मात्रा में बनता है और यह सेमीनिफिरस ट्यूबूल्स को सक्रिय करता है तथा शुक्राणु बनाने में मदद करता है। एड्रीनो–कॉर्टिकोट्रॉपिक हार्मोन (ए0सीटी0एच0) भी शुक्राणु के निर्माण में मदद करता है।

एल0एच0 हार्मोन लेडिग कोशिकाओं को सक्रिय कर टेस्टोस्टोरॉन बनाते हैं। शुक्राणु बनाने के लिए टेस्टोस्टोरॉन ज़रूरी होते हैं और यह नर पशुओं को मर्दानी विशिष्टतायें देते हैं।

अगर ये हार्मोन प्रणालियां नियमित न हों तो पशु बॉझपन, नपुंसकता आदि जैसी जटिल समस्याओं से पीड़ित हो जाते हैं। हार्मोन को नियमित रखने के लिए सही आहार और स्वास्थ्य प्रबन्ध आवश्यक होते हैं।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–7

गर्भकाल और गर्भ निदान

रज़ फलीकरण होने के बाद, भ्रूण/युग्मनज (Zygote) की रचना होती है। गर्भ, रज़वाहिनी से गर्भाशय सींग की ओर आगे बढ़ता है और 3–4 दिनों में वह गर्भाशय के सींग में पहुँच जाता है। शुरूआत में गर्भ एक कोशी होता है। उसके विभाजन के बाद एक में से दो, दो में से चार, चार में से आठ, आठ में से सोलह कोश बनते हैं और यह प्रक्रिया चालू रहती है। फलीकरण के चार दिनों बाद सोलह कोशीय गर्भ गर्भाशय के सींग में पहुँचते ही एक जगह स्थिर होता है, जहाँ वह (ब्लास्टुला) मुक्त रूप से 8 से 9 दिनों तक तैरता है। लगभग 12 से 13 दिनों के बाद ब्लास्टुला तैरना छोड़ देता है और रजत्र की दीवार की कमजोर स्तर पर लग जाता है। शुरूआत में गर्भ का गर्भाशय की दीवार के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होने से प्रोजिस्ट्रान अन्तःस्राव के असर से गर्भाशय की दीवार की ग्रन्थियों में से उत्पन्न एक प्रकार के रस से गर्भ का पोषण होता है। गर्भाशय के इस रस को गर्भाशय दूध (Uterine Milk) कहा जाता है।

जैसे–जैसे गर्भ की वृद्धि होती है, वैसे–वैसे गर्भ के पोषण की जरूरत बढ़ती रहती है और इसीलिए गर्भ के चारों ओर, गर्भ अपना आवरण तैयार करता है। गाय में गर्भधारण के दूसरे सप्ताह से (13दिन) आवरण बनने की शुरूआत होकर पॉचवें सप्ताह में पूर्ण होती है और गर्भ के आवरण के कोटिलीडन्स गर्भाशय की दीवार के कोटिलीडन्स के साथ और 45 दिनों में गर्भाशय के साथ जुड़ जाता है। संयोजन के बाद गर्भ आवरण के माध्यम से पोषण और वायु प्राप्त करता है।

गर्भधारण के 90 दिनों में गर्भ का विकास चूहे के आकार के समान होता है। इस समय गर्भाशय का कोटिलिडन्स भी अपने मूल आकार से 3 से 4 गुना अधिक आकार का दिखने को लगता है। मतलब कि उनका कद 3 से 4 से0मी0 जितना होता है। लगभग 120 दिनों के गर्भधारण बाद गर्भाशय को खून लेने वाली धमनी (मिडल यूटेराइन आर्टरी) में खून के विशिष्ट प्रवाह के कारण धड़कन का अनुभव हो सकता है जिसे 'फ्रिमीट्स' कहा जाता है। फ्रिमीट्स का अनुभव करने के लिए गुदा के माध्यम से परीक्षण दौरान कमर की हड्डी पर से गुजरती धमनी पर अॅगुली रखनी चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

गर्भधारण के 135 वें दिन गर्भ का वज़न 1400 ग्राम जितना होता है। गर्भ का तेजी से और त्वरित विकास गर्भधारण के 3 माह में होता है। गर्भधारण के 6 माह के बाद गर्भाशय का आकार बढ़ने से गर्भाशय धीरे–धीरे पेट की गुहा में खींचता है। गर्भधारण समय पूर्ण होने के पहले बच्चा धीरे–धीरे कमर के खाली भाग की ओर वापस आता है।

पशु में गर्भधारण का काल

मादा पशु में रज़ के फलीकरण होने के बाद गर्भ के पूरे विकास के बाद जीवित बच्चे को जन्म देने के समय की अवधि को गर्भधारण काल कहा जाता है।

पशु	गर्भधारण काल
गाय	240–285 दिन
भैंस	310 दिन
घोड़ी	340दिन
कुतिया	60–65 दिन
सुअर/हिरणी	111–116 दिन

गर्भाशय में बच्चे की सामान्य स्थिति

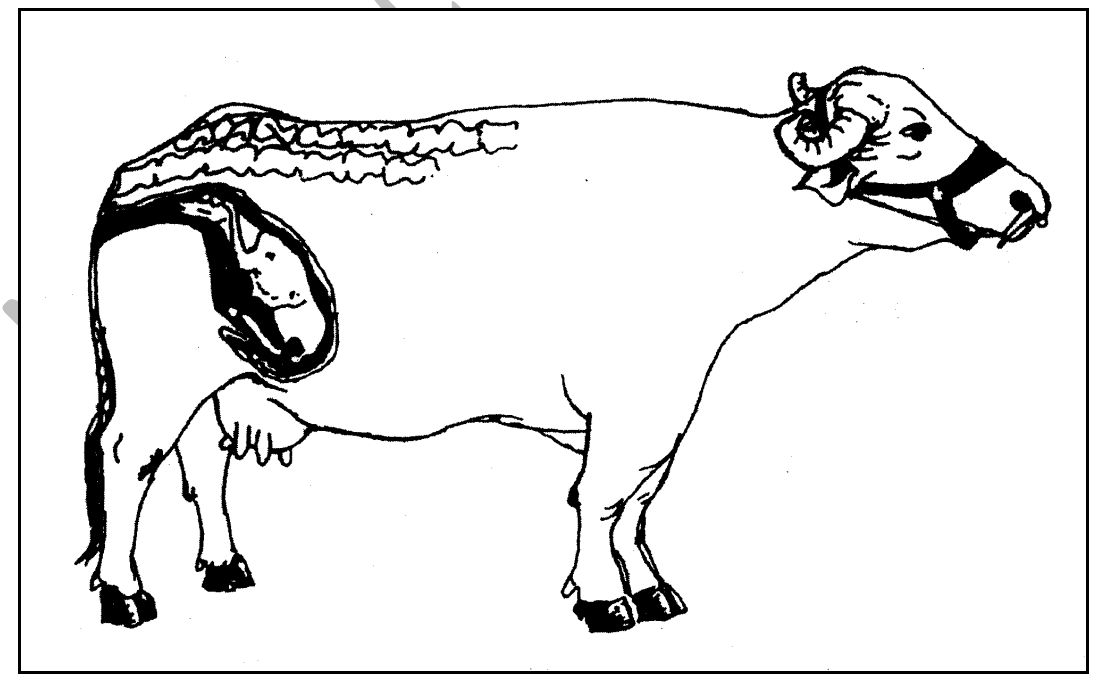

COMMERCIAL USE

गर्भावस्था के विभिन्न स्तर

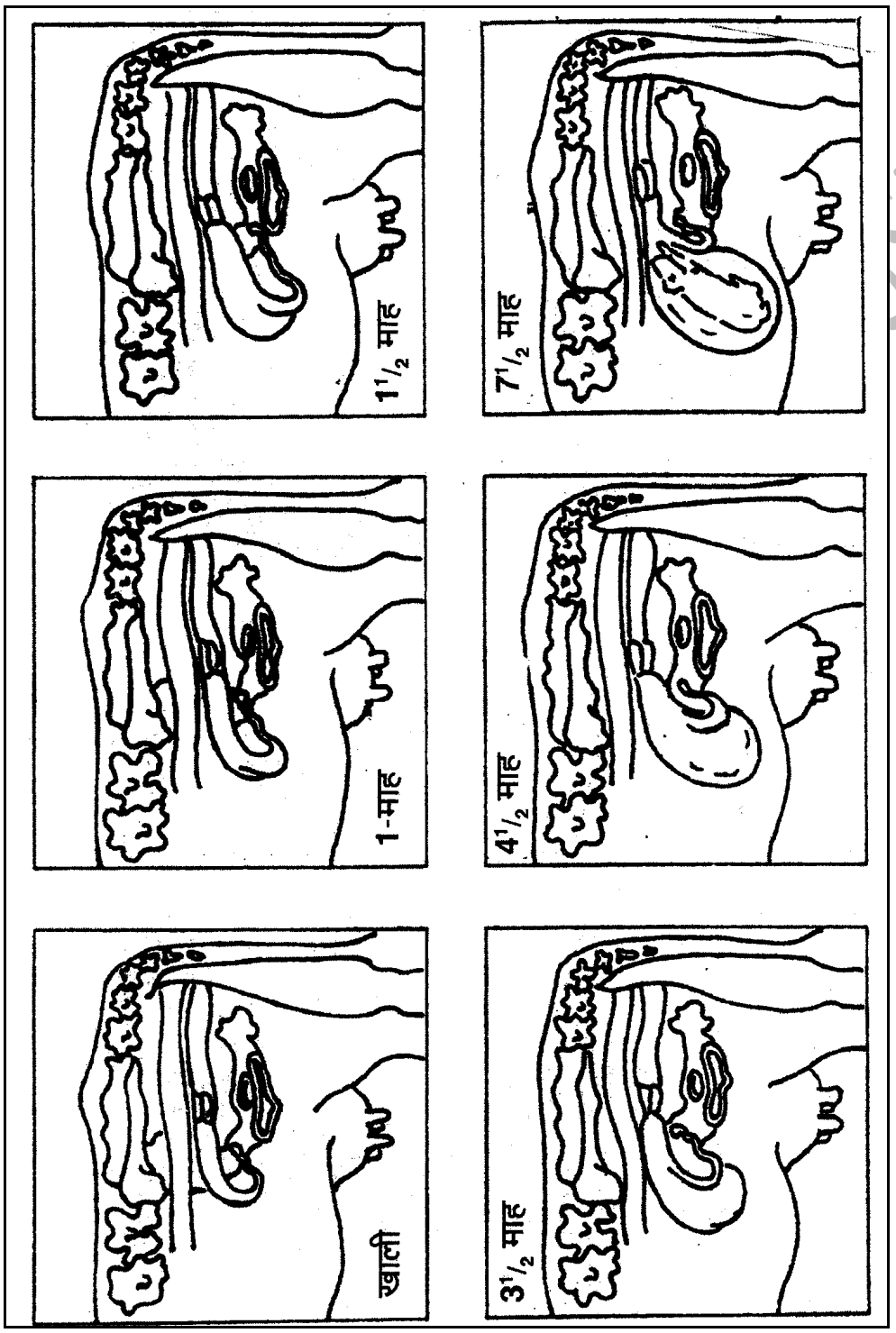

गर्भनिदान की ज़रूरत किसलिए **?**

किसानों के लिए आवश्यक है कि गाय–भैंस ठीक समय पर तो गाभिन हों ही बल्कि उनका ब्यान भी ठीक समय पर हो। इसलिए पशु के दो ब्यात के बीच का समय 13 से 14 माह आदर्श माना जाता है। प्रगतिशील किसान कि लिए फलीकरण होने के 90 दिनों के बाद अपने पशु की गर्भाधान स्थिति की जॉच करना आवश्यक है क्योंकि कभी–कभी स्वस्थ पशुओं मे भी गर्भ शरीर में मर जाता है या गर्भपात हो जाता है। इसके अलावा, पशु के गाभिन न होने के कारण बहुत से कारण हैं। एक बार के वीर्यदान से करीब 30 प्रतिशत पशु गाभिन होते हैं। फलीकरण के 3 माह बाद, 30 प्रतिशत पशुओं का परीक्षण किया जा सकता है। एक बार गर्भाधान स्थिति की जानकारी हो गयी तो गाभिन नहीं हुए पशुओं को दूसरी बार गर्मी के समय फलित किया जा सकता है।

गर्भनिदान से लाभ –

1. पशु खाली है या गाभिन, यह जान सकते हैं।
2. यदि पशु खाली है तो वह कौन सी बीमारी की वज़ह से खाली है, इसका योग्य निदान करके उसकी देखभाल हो सकती है और दो ब्यातों के बीच का अन्तर कम किया जा सकता है।
3. गर्भ–स्थिति निश्चित होने के पश्चात्, पशु को उचित खुराक देनी चाहिए और उनकी समुचित देख–रेख करनी चाहिए। दूध दुहना बन्द करने के लिए भी योजना बनानी चाहिए जिससे कि पशु दूध देना बन्द कर दे।
4. पशु के ब्यात की दिनांक तय हो सकती है और अन्य केन्द्र की गर्भधारण चिकित्सा प्रतिशतता भी मालूम की जा सकती है।

ब्यात के बाद तीन माह में पशु गाभिन हो जाए तो इसके दो ब्यात के बीच का अन्तर कम होता है और पशु दो तीन माह के लिए दूध देना बन्द करता है। इसलिए किसान को दुधारू पशुओं में से सतत् और ज्यादा दूध उत्पादन मिलता है। फलस्वरूप, जीवनभर पशु के कुल दूध उत्पादकता में और दूध और पशु ज्यादा संख्या में मिलते हैं। औसत दूध उत्पादन खर्च कम होता है। दूध की पैदावार सस्ती होने से किसान की आय बढ़ती है। यह लाभ तब ही पाया जाता है जब गर्भधारण चिकित्सा की जाए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

ब्यात के बाद दो से तीन माह में पशु गाभिन हो जाए तो इसके दो ब्यात के बीच का अन्तर कम होता है और पशु दो–तीन माह के लिए दूध देना बन्द करता है। इसलिए किसान को दुधारू पशुओं में से सतत् और ज्यादा दूध उत्पादन मिलता है। आखिर में, फलस्वरूप जीवनभर पशु के कुल दूध उत्पादकता में और दूध और पशु ज्यादा संख्या में मिलते हैं। सरेरांश दूध उत्पादन व्यय कम होता है। दूध की पैदावार सस्ती होने से किसान की आय बढ़ती है। यह लाभ तब ही पाया जाता है जब गर्भधारण चिकित्सा की जाए।

गर्भ निदान

कृत्रिम वीर्यदान या कुदरती संभोग के बाद पशु खाली है या गाभिन हुआ है कि नहीं, यह जानने के परीक्षण को गर्भनिदान कहते हैं। गुदा में हाथ डालकर मादा के जनन अंगों की जॉच करते समय यदि गर्भाशय में 3 मास का या इससे ज्यादा समय का गर्भ हो तो आसानी से मालूम हो सकता है। 3 माह से कम समय कि गर्भधारण की जॉच हो सकती है, परन्तु इस समय गर्भ बहुत नाजुक होने से उसे नुकसान पहुॅचने का भय है। इसलिए गर्भ की सुरक्षा के लिए और गर्भधारण के निश्चित परिणाम जानने के लिए तीन माह से ज्यादा समय के वीर्यदान किए पशु का गर्भनिदान करना चाहिए। साधारण रूप से पशु के फलीकरण बाद यदि फिर से 21 दिनों में गर्मी में नहीं आता है तो गर्भधारण की आशा की जा सकती है। यह सब चिकित्सा या निदान–परीक्षण करने पर भी पशु गाभिन है यह कहना ठीक नहीं है। फलीकरण के बाद पशु यदि 3 माह तक गर्मी में न आए तो गर्भधारण निदान करना चाहिए। पशु के बाहर के लक्षण देखकर, वह गाभिन है या खाली यह कहना कठिन है। पशु गाभिन है या नहीं और गर्भाशय में कोई रोग है या नहीं, यह निदान कराने के बाद ही मालूम हो सकता है।

गर्भधारण के चिन्ह

गर्भधारण के बाहरी लक्षण

1. सफल वीर्यदान के 21 दिनों बाद फिर से मादा पशु गर्मी में नहीं आती है।
2. गर्भधारण हो जाने के बाद पशु शान्त हो जाता है।
3. बछिया जब पहली बार गाभिन हुई हो तो 4 से 5 माह बाद थन का विकास होने लगता है।
4. गाभिन पशु का पेट बड़ा होने लगता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

गर्भधारण के आन्तरिक लक्षण

मादा में गर्भधारण का निदान पशु की गुदा में हाथ डालकर जननांग पकड़ कर किया जाता है। आन्तरिक गर्भधारण चिन्ह निम्नलिखित हैं–

1. गर्भाशय मुख टटोला जा सकता है, इससे चिकनाई का अनुभव होता है।
2. गर्भाशय सींग में जिस तरफ गर्भ का विकास होता है, उस सींग का विस्तार बड़ा दिखाई देता है।
3. प्रारम्भिक गर्भाधान के दौरान टटोलने पर भ्रूण की फिल्ली फिसलना अँगूठे और तर्जनी के बीच महसूस होता है।
4. गर्भाशय को खून की आपूर्ति करने वाली धमनी साधारण रूप से बड़ी दिखाई देती है और इनकी नसों में अजीब सी आवाज आती है।

गुदा में हाथ डालकर गर्भ जॉच करने की विधि –

पशुओं में गर्भ जॉच, मूत्र जॉच के द्वारा किए जाने की सत्यता अभी प्रमाणित नहीं हुई है। अतः कृत्रिम वीर्यदान के दो महीने या बाद में गुदा में हाथ डालकर गर्भ की जॉच की विधि उपयोग में लायी जाती है, जिसका क्रमवार विवरण निम्न प्रकार है–

1. गुदा में हाथ डालकर गर्भ जॉच के लिए आवश्यक वस्तुऐं –

   1. अड़गड़ा 2. रस्सी 3. एक बाल्टी पानी 4. साबुन 5. तौलिया

2. गर्भ जॉच वाले पशु का इतिहास –

   गर्भ जॉच करने से पहले निम्न बातें पशु मालिक से पूछनी चाहिए–

1. पशु को ब्याये हुए कितना समय हुआ है ?
2. पशु को आखिरी बार कब वीर्यदान किया गया था, तथा उससे पहले पशु को कब–कब वीर्यदान किया गया है।
3. गर्भ जॉच की विधि –

1. हाथों को अच्छी तरह चिकना करने के बाद एक हाथ को थोड़ा इधर–उधर घुमाते हुए पशु की गुदा में हाथ डालकर गोबर निकाला जाता है।
2. इसके बाद सबसे पहले गर्भाशय मुख को तलाशा जाता है। पशु के गर्भित न रहने की अवस्था में गर्भाशय मुख पैलविक कैविटी में स्थित होता है। गर्भित होने के अवस्था में गर्भाशय मुख पैलविक कैविटी से आगे भी जा सकता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

3. इसके बाद हाथ को आगे बढाकर हाथ को गर्भाशय सींगों के ऊपर लाया जाता है तथा गर्भाशय सींगों को स्पर्श किया जाता है।
4. यदि दोनों गर्भाशय सींगों मे से एक गर्भाशय सींग दूसरे गर्भाशय सींग की अवस्था में बढ़ा हुआ है तो यह प्रदर्शित करता है कि पशु गर्भित है।
5. यदि एक गर्भाशय सींग का आकार मुर्गी के अण्डे के बराबर है तो पशु लगभग दो माह से गर्भित हो सकता है।

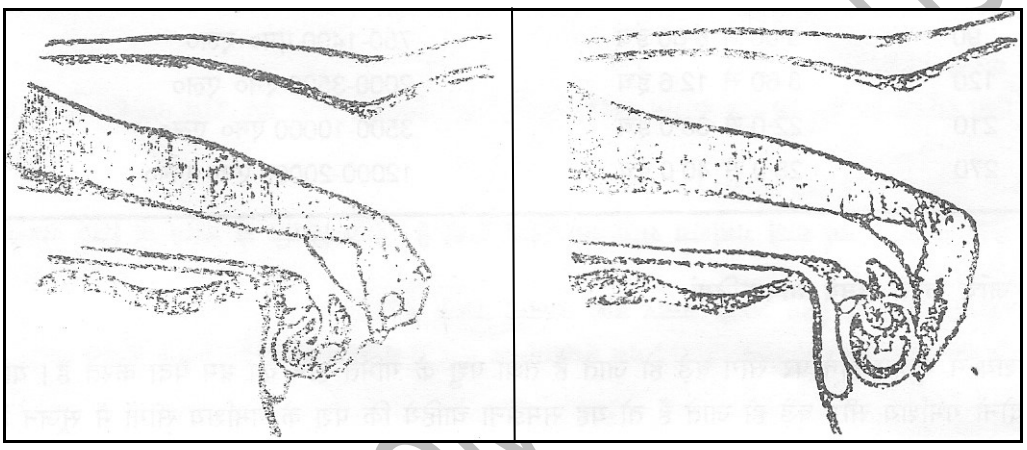

गर्भ जॉच (दो माह की अवस्था पर) गर्भ जॉच (तीन माह की अवस्था पर)

6. यदि एक गर्भाशय सींग का आकार क्रिकेट की गेंद के आकार का है तो पशु लगभग 03 माह का गर्भित हो सकता है।
7. पशु के 04 माह की गर्भावस्था होने पर गर्भ वाला सींग एब्डोमिनल कैविटी की तरफ चला जाता है तथा गर्भ वाले सींग को आसानी से महसूस किया जा सकता है।
8. पशु के 05 माह की अवस्था पर गर्भाशय मुख पैल्विक कैविटी पर खिंचा रहता है।
9. पशु 06 माह की अवस्था में गर्भ को महसूस करना कठिन होता है, क्योंकि गर्भ एब्डोमिनल कैविटी में काफी नीचे चला जाता है, पैल्विक कैविटी में केवल खिंची हुई योनि होती है।
10. पशु के 08 माह की गर्भावस्था में बच्चे को महसूस किया जा सकता है। बच्चे के सिर को सबसे पहले महसूस किया जा सकता है।
11. पशु के 09 माह गर्भावस्था में हाथ डालने पर बच्चा स्पष्ट महसूस होता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

गर्भधारण की विभिन्न अवधियों में भ्रूण का नाप तथा गर्भाशय सींग के अन्दर तरल पदार्थ की मात्रा की सारणी निम्न प्रकार है–

गर्भ दिन	गर्भ या भ्रूण की नाप	तरल पदार्थ की मात्रा
40	1.00 से 1.50 इंच	75–100 एम0 एल0
60	2.25 से 3.25 इंच	250–450 एम0 एल0
90	5.00 से 6.60 इंच	750–1400 एम0 एल0
120	8.60 से 12.6 इंच	2000–3500 एम0 एल0
210	22.0 से 30.0 इंच	3500–10000 एम0 एल0
270	28.0 से 40.0 इंच	12000–20000 एम0 एल0

गर्भ जॉच करत समय सावधानियॉ–

1. गर्भाशय में सूजन होने पर सींग बड़े हो जाते हैं तथा पशु के गर्भित होने का भ्रम पैदा करते हैं। यदि पशु के दोनों गर्भाशय सींग बड़े हो जाते हैं तो यह समझना चाहिए कि पशु के गर्भाशय सींगों में सूजन है तथा पशु गर्भित नहीं है।
2. पशु की 05 महीने की गर्भावस्था के बाद गर्भ एब्डोमिनल कैविटी में चला जाता है जिसके कारण गर्भाशय सींग को महसूस करने के लिए काफी अन्दर हाथ डालना पड़ता है।
3. भरा हुआ मूत्राशय, गर्भ वाले गर्भाशय सींग सा प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति से बचने के लिए सबसे पहले गर्भाशय मुख को पकड़ना चाहिए।
4. भरा हुआ रयूमन लगभग 08 माह के गर्भ सा प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति में गर्भ जॉच गर्भाशय मुख पकड़कर शुरू करनी चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–8

गाभिन पशु की देखभाल

एक किसान की इच्छा होती है कि गाय/भैंस का कुल दूध उत्पादन ज्यादा बढ़े। दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए पशु को सन्तुलित आहार मिलना बहुत जरूरी है। सन्तुलित आहार का ध्यान बछिया के जन्म से ही रखना बहुत आवश्यक है। बछिया के स्वास्थ्य तथा आहार का अच्छा ध्यान रखा जाय तो वह कम उम्र में ही ऋतु में आ जाती है तथा वीर्यदान करवाने पर दो या ढ़ाई साल में ही बच्चा देने योग्य हो जाती है।

गाय/भैंस जब गाभिन होती है तब उसकी सही देखभाल करने से गर्भपात से सम्बन्धित समस्याओं को रोका जा सकता है। गर्भ का विकास छह से सात माह के दौरान तेजी से होता है। इसलिए इस स्थिति में पशु को सन्तुलित भोजन तथा पीने का पानी, उपयुक्त मात्रा में मिलना चाहिए। उसे खुली हवादार गौशाला में रखना चाहिए। निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें–

1. गर्भधारण के 6 से 7 माह के बाद, पशु को बहुत दूर चारे के लिए नहीं ले जाना चाहिए। ऊबड़–खाबड़ रास्तों पर चलाना नहीं चाहिए।
2. गर्भधारण के 7 माह के बाद, गाभिन पशु का दूध न निकाल कर उसे शुष्क कर देना चाहिए।
3. गाभिन पशु को खड़े तथा बैठने के लिए उचित जगह, हवा तथा प्रकाशयुक्त जगह एवं पिछला हिस्सा थोड़ा सा ऊँचा रहे, ऐसी जगह का बन्दोबस्त करना चाहिए।
4. यदि गाभिन पशु को पौष्टिक भोजन एवं पशु चारे की उपयुक्त मात्रा न मिले, तो पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार नहीं होगा और वे कम दूध देने लगेंगी।

हरा चारा	25 से 30 किलो
सूखा चारा	5 किलो
सन्तुलित आहार	2 से 2.5 किलो
खनिज मिश्रण	30–50 ग्राम
नमक	30–50 ग्राम

NOT FOR COMMERCIAL USE

5. गाभिन पशु को स्वच्छ एवं ताज़ा पानी जितना हो सके, उतना देना चाहिए। सामान्यतः पशु को हर दिन औसतन 30 से 45 लीटर पानी की जरूरत होती है।
6. पशु के पहली बार गाभिन होने पर 6 से 7 माह के बाद उसे अन्य दूध देने वाले पशुओं के साथ बॉधना चाहिए और शरीर, पीठ तथा थन की मालिश करनी चाहिए। पैर पर पट्टियॉ बॉधनी चाहिए जिससे कि ब्याने के बाद दूध निकालने में तकलीफ न हो।
7. ब्याने के चार–पॉच दिन पहले उसे अलग बॉधना चाहिए और बॉधने की जगह पर्याप्त, स्वच्छ एवं प्रकाशयुक्त होनी चाहिए। सूखा चारा डालकर बैठने की जगह व्यवस्थित रखनी चाहिए।
8. ब्याने के एक–दो दिन पहले दिन–रात पशु पर नज़र रखनी चाहिए।

<u>ब्याने के समय की देखभाल</u> –

ब्याने के चार–पॉच दिन पहले से ही गाभिन पशु को अन्य पशुओं से अलग बॉध कर रखना चाहिए। पशु से खड़े रहने, बैठने की जगह पर्याप्त और स्वच्छ होनी चाहिए और रहने की जगह पर सूखा चारा डालकर पशु को बैठने में आसानी हो ऐसा बन्दोबस्त करना चाहिए। ब्याने के एक दिन पहले गाभिन पशु के जनन अंग से चिकना प्रवाही का स्राव होता हैं। पशु को बाधा पहुंचाए बगैर हर एक घन्टे (रात के दौरान भी) उसका अवलोकन करना चाहिए।

ब्याने के समय पर जननांग से एक प्रवाही बुलबुला निकलता है जो धीर–धीरे बड़ा होता जाता है और अन्त में फट जाता है। उसमें बच्चे के पैर का खुर का भाग दिखाई देता है और आगे के पैर के घुटने के बीच में बच्चे का सिर दिखाई देता है। धीरे–धीरे बच्चा बाहर आता है और ब्यान पूर्ण होता है। कभी–कभी गाभिन पशु अशक्त होता है तब बच्चे को बाहर आने में तकलीफ होती है। ऐसी स्थिति में अनुभवी व्यक्ति बछिया/बछड़े को बाहर खींचने में मद्द कर सकता है। बच्चे की ऊपर बताई गई स्थिति में अगर कोई परिवर्तन हो, तो तुरन्त पशु चिकित्सक को खबर करनी चाहिए। ब्याने के समय अगर बच्चा सामान्य स्थिति में न हो तो गाय/भैंस के पेट में दर्द होता है, बार–बार पैर थपथपाती है, उठ–बैठ करती है और ब्यान से पहले बहुत तनावपूर्ण नज़र आती है।

<u>ब्याने के बाद पशु की देखभाल</u> –

ब्याने के पहले चारे में बनायी गयी सतह पर से सूखा चारा दूर करने के बाद जगह स्वच्छ करनी चाहिए। जब तक बीजांडासन/प्लेसेन्टा (Placenta) गिर न जाय, तब तक पशु का ध्यान रखना चाहिए। कई बार कौवे–कुत्ते यह बीजांडासन ले जाते हैं। जैसे ही बीजांडासन गिर जाय, उसे

NOT FOR COMMERCIAL USE

निकालकर जमीन में गाड़ देना चाहिए। सामान्यतः ब्याने के बाद 10 से 12 घन्टे बाद बीजांडासन गिर जाता है। अगर 24 घन्टे के अन्दर बीजांडासन नहीं गिरता है तो पशु चिकित्सक को बुला कर बीजांडासन निकलवा देना चाहिए।

ब्याने के 15 से 20 मिनट बाद दूध दुहना चाहिए। ब्याने के बाद पहली बार के दूध को खीस/कोलोस्ट्रम (Cholestrom) कहा जाता है। गाय/भैंस को ब्याने में बहुत तकलीफ होती है, इसलिए ब्याने के बाद 2 से 3 दिन तक पशु को हल्की खुराक जैसे कि गरम चावल, उबाला हुआ बाजरा, तेल मिलाए हुए गेंहू, गुड़, सुवा, आजवाईन, मेथी और काली जीरा, अदरक देना चाहिए, ताकि बीजांडासन गिरने में आसानी हो। पशु को हरा, ताजा चारा और पानी, उसकी इच्छानुसार देना चाहिए। पशु को गरम पानी और सेंद्रिय आहार नहीं देना चाहिए।

बीजांडासन के गिरने के बाद, अगर सर्दी का मौसम हो, तो थोड़े गर्म पानी से और अगर गर्मी हो तो स्वच्छ और ताजे पानी से स्नान करवाना चाहिए। ब्याने के बाद पशु को कोई बीमारी नज़र आए तो तुरन्त पशु चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए। सामन्यतः ब्याने में अगर कोई तकलीफ न हुई हो ओर बीजांडासन समय पर गिर गया हो तो गर्भाशय का संकुचन तेजी से हो जाता है। ऐसी गाय/भैंस 40 से 60 दिन में गर्मी में आती है। ब्याने के बाद पहली बार जब पशु 40 से 60 दिनों के बाद गर्मी में आता है तो उसे वीर्यदान नहीं करवाना चाहिए, किन्तु इसके बाद जब वह दूसरी बार गर्मी में आए, तब उसे वीर्यदान करवाना चाहिए। अगर इन दिनों में पशु गर्मी में नहीं आता है, तो पशु चिकित्सक को दिखाकर उचित जॉच और चिकित्सा करवानी चाहिए।

नवजात बछड़े की देखभाल –

(1) ब्याने के पहले बच्चे की देखभाल –

ब्याने के पहले ही, बच्चे की अच्छी तरह देखभाल करने से जन्म के बाद बच्चे का विकास अच्छा होता है, उसका वज़न ठीक रहता है और उसे कोई बीमारी भी लगती नहीं है। तेजी से विकास के कारण, वह जल्दी वयस्क होता है और जल्दी से गाभिन होता है। इसलिए गाय/भैंस के गर्भाधान के बाद 6 से 7 माह के दौरान, उस पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान देना चाहिए क्योंकि इस समय के दौरान गर्भ का विकास ज्यादातर होता है। किसानों में ऐसी मान्यता है कि दूध न देने वाले गाभिन पशु को मिश्र/ सेन्द्रिय आहार नहीं देना चाहिए, परन्तु यह बिल्कुल गलत है । अच्छा होगा कि पशु के ब्याने के 60 से 70 दिन पहले से ही दूध दुहना बन्द करना चाहिए और उसे हरे चारे के साथ मिश्र

NOT FOR COMMERCIAL USE

सेन्द्रिय आहार देना चाहिए। ऐसा करने से नवजात बछड़े का जन्म के समय वज़न ज्यादा होता है, ब्याने में आसानी होती है, बीजांडासन जल्दी गिरता है, और दुग्ध उत्पादन ज्यादा होता है। इसलिए बछड़े की सही देखभाल गाभिन माता की देखभाल से ही शुरू होती है। बछड़े में मृत्यु की सम्भावना घटाने के लिए गाय/भैंस को कृमिनाशक दवाई ब्याने से एक महीने पहले पिलानी चाहिए।

(2) ब्याने के बाद बच्चे की देखभाल –

1. जन्म के तुरन्त बाद, बछड़े की उचित देखभाल करनी चाहिए।
2. उसे 15–30 मिनट के अन्दर खीस (ब्याने के बाद तुरन्त निकाला गया दूध) इसके बाद शुरू में 4 से 5 दिन तक, दिन में 3 से 4 बार दूध देना चाहिए।
3. खीस, विरेचक असरवाला होता है और विटामिन एवं प्रतिरक्षण तत्वों से भरपूर होने के कारण इससे रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।
4. यदि खीस उपलब्ध न हो, तो एक लीटर गर्म पानी में दो अन्डे, 200 ग्राम कॉड लिवर ऑयल और 20 ग्राम केस्टर ऑयल का घोल बनाकर बछड़े को पिलायें।
5. नाभि की रस्सी को काटकर बछड़े को मॉ से अलग करना चाहिए।
6. रोग के संक्रमण को रोकने के लिए बछड़े की नाभि पर टिंचर आयोडीन लगाना चाहिए। नाभि के छोर को बॉधना चाहिए बल्कि नियमित रूप से अच्छी तरह मरहमपट्टी करनी चाहिए।
7. सुव्यवस्थित डेरी फार्म में, जन्म के तुरन्त बाद, बछड़े को मॉ से अलग किया जाता है। इससे बछड़े द्वारा ज्यादा दूध पीने की सम्भावना कम होती है। इस स्थिति के दौरान बछड़े के मुँह में दूध में डुबोई हुई अँगुली रखकर बाल्टी में से दूध पीने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
8. बच्चे को मॉ से अलग करने के कारण दूध दुहने की क्रिया में भी आसानी रहेगी। इसे जन्म समय से दूध छुड़ाने की विधि कहते हैं। बछड़े की दूध पीने की आदत से गाय/भैंस के स्तनाग्र को बछड़े के दांत से नुकसान होता है।

बछड़े की देखभाल के दौरान ध्यान रखने लायक सूचनायें –

1. बछड़े की खुराक में नियमितता जरूरी है। बछड़े को दिन में दो बार खिलाना चाहिए।
2. बछड़े को कम या ज्यादा नहीं खिलाना चाहिए।
3. वज़न का 10 % जितना दूध देना चाहिए। यदि बछड़े का वज़न 40 किग्रा0 है, तो उसे 4 लीटर दूध देना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

4. दूध की गुणवत्ता, मात्रा और तापमान सही तरह नापना चाहिए।
5. खुराक देने के बर्तन की स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए।
6. बछड़े को स्वच्छ, सूखी, सुव्यवस्थित, प्रकाशयुक्त जगह पर और हो सके तो अलग रखना चाहिए।
7. जुँए, चीचडी़, खुजली के कीड़ों आदि से बछड़े को बचाना चाहिए।
8. बछड़े को मुक्त शारीरिक कसरत करवानी चाहिए।
9. जैसे ही बछड़ा 3–4 सप्ताह का हो जाए, तो दूध की जगह दूध का पाउडर देना चाहिए।
10. इस स्थिति में वे पीने का पानी लेना शुरू करते हैं। स्वच्छ और ताजा पानी उपलब्ध करवाना चाहिए।
11. बछड़ा जब 7–8 सप्ताह का हो जाए, तब धीरे–धीरे उसे सन्तुलित आहार देना चाहिए और धीरे–धीरे दूध देना कम करना चाहिए।
12. 8 से 10 दिन की उम्र में ही सींग जलवा देने चाहिए।
13. समुचित टीकाकरण और कृमिनाशक दवाइयॉ नियमित रूप से देनी चाहिए।
14. बछड़ा जब बड़ा हो जाए तो उसे ताज़ा हरा चारा देना चाहिए।

खीस (कोलोस्ट्रम) पिलाने के लाभ –

1. कोलोस्ट्रम में प्रतिरक्षक द्रव्य होने के कारण बछड़े को बीमारियों से रक्षण मिलता है।
2. कोलोस्ट्रम के विरेचक असर से बछड़े की ऑत में जन्म से समय से ही जो कचरा होता है, वह निकल जाता है।
3. कोलोस्ट्रम में सामान्य दूध से 4 से 5 गुना ज्यादा प्रोटीन होती है। इसलिए कोलोस्ट्रम देने से बछड़े को ज्यादा शक्ति मिलती है और उनका विकास तेजी से होता है।
4. कोलोस्ट्रम में विटामिन्स ज्यादा होते हैं। कोलोस्ट्रम में विटामिन–ए सामान्य दूध से 10 गुना ज्यादा होता है। विटामिन की वजह से घने बाल और त्वचा मुलायम होती है। विटामिन–ए से बछड़े की दृष्टि अच्छी बनी रहती है।

   कई किसानों में ऐसी मान्यता है कि बीजांडासन के गिरने के बाद ही गाय/भैंस का दूध (कोलोस्ट्रम) दुहना चाहिए और बछड़े को एक या दो घन्टे के बाद यह दूध (कोलोस्ट्रम) देना चाहिए। यह मान्यता गलत है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

बछड़े को सींग रहित करना –

1 10 से 15 दिन की आयु में ही बछड़े के सींग जलवा देने चाहिए।

लाभ–

1. सींग रहित पशु को कम जगह की जरूरत पड़ती है।
2. आपस में लड़ते समय, पशुओं को सींगों से चोट नहीं लगती है।
3. सींग की घातक बीमारियों से बचाव किया जा सकता है।

बछड़े को कृमिनाशक दवा देना –

बछड़े के पेट में कीड़े पड़ना एक आम बीमारी है। कीड़ों के संक्रमण से, बछड़े के पेट और आंत्र में कीड़े हो जाते हैं। ये कीड़े बछड़े की, खाई हुई खुराक से पोषक द्रव्य खा जाते हैं और पेट और आंत्र के स्नायुओं को भी नुकसान पहुँचाते हैं। इसके कारण, बछड़े की खुराक पचाने की क्षमता कम हो जाती है और बछड़ा शक्तिहीन हो जाता है। अतिसार या सख्त कब्ज़ हो जाता है और शरीर की वृद्धि पर भी गम्भीर असर पड़ता है। त्वचा खुरदुरी हो जाती है, पेट बड़ा हो जाता है और बाल भी खड़े रहते हैं। इसीलिए 15 दिन की आयु के बाद में हर महीने एक साल तक बछड़े को कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए। एक साल की आयु के बाद 4 महीने के समयान्तर पर कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए।

मुँहपका–खुरपका (**F.M.D.**) की बीमारी का टीका लगवाना –

3 महीने की आयु में, मुँहपका–खुरपका रोग के टीके लगवाने चाहिए। 6 महीने की आयु में टीके की संवर्धित खुराक देनी चाहिए और हर 6 महीने यह दोहराना चाहिए। वयस्क पशु में मुँहपका–खुरपका रोग की बीमारी के टीके साल में दो बार देने चाहिए। आई0आई0एल0, हैदराबाद ने रक्षा ट्रायोवेक नामक टीके को प्रस्तुत किया है, जो मुँहपका–खुरपका, गलाघोंटू और ब्लैक क्वार्टर की रोकथाम में सहायक है। जब पशु 4 महीने का हो जाए, तब इसे देना चाहिए और बाद में हर साल टीकाकरण की विधि पूर्ण करवानी चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

संकर पशु के शरीर का वज़न –

पशु की छाती का माप (गर्थ – आगे के पैर के पिछले हिस्से की परिधि की माप) इन्च या सेन्टीमीटर में और पशु का वज़न –कोष्ठक दिया गया है –

घेरे का माप		संकर जाति के पशु का वज़न	
इन्च	सें0मी0	एच0एफ0 कि0ग्रा0	जर्सी कि0ग्रा0
23	58	21	19
24	60	23	21
25	62	26	24
26	65	29	27
27	68	32	30
28	70	35	33
30	75	43	40
31	78	47	44
32	80	51	48
33	83	56	52
34	85	61	57
35	88	66	62
37	92	76	72
38	95	82	78
39	98	88	84
40	100	95	90
41	102	102	97
42	105	109	104
43	107	116	111
44	110	123	118
45	112	131	126
46	115	139	134
47	117	148	142
48	120	156	151
49	122	165	160
50	125	175	169
51	127	185	179
52	130	195	189
53	132	205	200
54	137	216	211
55	137	227	222
56	140	239	234
57	142	251	246
58	145	263	258
59	147	276	272
60	150	289	284

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–9

प्रजनन दोष एवं बीमारियां

मादा पशुओं में बांझपन–

मादा पशुओं के जवानी की अवस्था पर पहुँचने पर अथवा उसके बाद मादा पशु गर्मी पर न आए अथवा तीन या चार बार वीर्य दान कराने के बाद पशु गर्भाधारण न करे तो ऐसे पशु को बॉझ कहते हैं, तथा इस अवस्था को बॉझपन कहते है।

बॉझपन दो प्रकार का होता है–

1. स्थायी बॉझपन
2. अस्थायी बॉझपन

1. स्थायी बॉझपन (**Sterility**)

यदि बॉझपन होने के कारणों का पता लगाने के बाद इलाज करके दूर नहीं किया जा सकता है तो ऐसे बॉझपन को स्थायी बॉझपन कहते हैं।

2. अस्थाई बॉझपन (**Infertility**)

यदि किसी बॉझपन के कारणों का पता लगाने के बाद इलाज करने से ठीक हो जाता है और पशु फिर से गर्भधारण करने लगता है तो ऐसे बॉझपन को अस्थायी बॉझपन कहते हैं।

बॉझपन होने के कारण –

पशुओं को बॉझपन निम्नलिखित दोषों के कारण होता है–

1. संरचनात्मक दोष
2. रोगों के कारण उत्पन्न दोष
3. हार्मोन के कारण उत्पन्न दोष
4. पोषण सम्बन्धित दोष

NOT FOR COMMERCIAL USE

1. संरचनात्मक दोष –

यदि दोष मादा पशु के अंगों की संरचना में है तो ऐसे दोष को संरचनात्मक दोष कहते हैं। संरचनात्मक दोष निम्न प्रकार होते हैं–

1. दोनों डिम्बाशय की अनुपस्थिति– यह स्थाई बॉझपन की स्थिति है। इसमें पशु गर्मी पर नहीं आता है। इसका इलाज सम्भव नहीं है।
2. दोनों रजवाहिनियों की अनुपस्थिति– यह स्थाई बॉझपन है। पशु गर्मी पर आता है परन्तु गर्भधारण नहीं करता है। इस बॉझपन का इलाज सम्भव नहीं है।
3. गर्भाशय की अनुपस्थिति– यह स्थाई बॉझपन की स्थिति है। पशु गर्मी पर आयेगा परन्तु गर्भ धारण नहीं करेगा। इसका इसका इलाज सम्भव नहीं है।
4. योनि की अनुपस्थिति– यह स्थाई बॉझपन की स्थिति है। पशु गर्मी पर आयेगा परन्तु गर्भधारण नहीं करेगा। इसका इलाज सम्भव नहीं है।
5. पूरे प्रजनन अंगों की अनुपस्थिति– यह भी स्थाई बॉझपन की स्थिति है। पशु गर्मी पर आयेगा परन्तु गर्भधारण नहीं करेगा। इसका इलाज सम्भव नहीं है।

2. रोगों के कारण उत्पन्न दोष –

पशुओं के निम्न रोगों के कारण बॉझपन उत्पन्न हो सकता है–

पशु स्वास्थ्य को सामान्यतः प्रभावित करने वाले तत्व प्रजनन क्षमता को भी प्रभावित करते हैं। उदाहरण के तौर पर जिस रोग में शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है, उस रोग में शुक्राणु का उत्पादन कम हो जाता है और रोग के तीव्र स्वरूप में गर्भपात हो जाता है। ऐसे, लगभग सभी रोग पशु की प्रजनन शक्ति पर असर करते है।

A. ब्रूसेल्लोसिस –

गाय, भैंस, सुअर को होता एक संक्रामक रोग है। ब्रूसेल्ला प्रजाति के जीवाणुओं से यह रोग होता है। पशु में ब्रूसेल्ला एबोर्टस जीवाणु गाभिन मादा के गर्भाशय में रहते हैं। इस रोग का मुख्य लक्षण गर्भपात है। सामान्य रूप से गर्भावस्था के पॉच से आठ माह की अवधि के दौरान गर्भपात हो जाता है। ऐसी मादाओं में ब्रूसेल्ला जीवाणु होते हैं और वे रोग फैलाते हैं। ब्रूसेल्लोसिस वाली मादा के प्लेसेन्टा, जनन तन्त्र से निकलता प्रवाही और दूध में अधिक मात्रा में जीवाणु होते

NOT FOR COMMERCIAL USE

हैं। सॉड़ के वृषण और उससे सम्बन्धित ग्रन्थियों में ब्रूसेल्ला जीवाणु रहते हैं और समागम के दौरान वीर्य द्वारा मादा के जनन तन्त्र तक पहुॅचते हैं। ऐसे सॉड़ द्वारा भी रोग फैलता है।

B. विब्रिओसिस –

यह मैथुनजन्य रोग वीब्रियो फीटस नामक जीवाणुओं से फैलता है। यह रोग 25 से 60 दिन की गर्भावस्था के दौरान होता है। इस समय में भ्रूण या गर्भ का नाश होता है, और ऐसा बार–बार होता है। अगर सॉड़ को रोग हो जाता हे तो इसके फैलने की सम्भावन रहती है।

C. ट्रायकोमोनियेसिस –

यह रोग ट्रायकोमोनास फीटस नामक प्रजीवाणु द्वारा होता है। प्रजीव सामान्य रूप से शिष्ण, योनि और गर्भाशय में रहते हैं। इस रोग के संक्रमण से मादा पशु में ऋतुचक्र की अनियमितता और फलीकरण की दर कम हो जाती है। पीड़ित पशु की योनि से असामान्य स्राव होता है। गर्भावस्था की प्रथम त्रैमासिक अवधि में गर्भपात होता है। भ्रूण/गर्भ के नाश होने से गर्भाशय में मावाद (Pyometra) होता है। कृत्रिम गर्भाधान अपनाने से इस रोग को फैलने से रोका जा सकता है।

D. पायोमैट्रा –

इस रोग में गर्भाशय में सेप्टिक होता है। यह रोग रजग्रन्थि पर कोर्पस ल्युटियम की उपस्थिति से होता है। एन्डोमेट्रोसिस की दीर्घकालीनता से यह रोग होता है। गर्भ के नाश और सैप्टिक करने वाले जीवाणु से यह रोग पैदा होता है। कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि सामान्य गर्भाधान है। इसलिए, इस रोग की सही जॉच और उपचार जरूरी है।

E. एन्डोमेट्रोसिस –

यह एक सबसे अधिक मात्रा में पाये जाने वाला गर्भाशय का रोग है जिसमें गर्भाशय का आन्तरिक आवरण प्रभावित होता है। जीवाणु योनिमार्ग से और ब्यान के दौरान गर्भाशय में पहुँचते हैं। सामान्यतः जीवाणु कोराइनोबेक्टीरियम पायोजीनस, स्ट्रेप्टोकोकाई, स्टेफाईलोकोकाई, ई.कोलाई, बी. नीक्रोफोरस, डीप्लोकोकाई, साल्मोनेल्ला, स्युडोमोनास ईर्यूजीनोज़ा वगैरह हो सकते हैं।

प्लेसेन्टा गिरने में ज्यादा समय लगने पर एन्डोमेट्रोसिस होता है। यदि एन्डोमेट्रोसिस अधिक समय तक रहती है तो प्रजनन क्षमता घट जाती है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

3. हार्मोन्स के दोष –

मादा पशु के ऋतु चक्र के हार्मोन्स में गड़बड़ी होने से पशु या तो गर्मी पर नहीं आता है अथवा गर्भधारण नहीं करता है। हार्मोन के दोष निम्न प्रकार के होते हैं –

1. छोटे गोल तथा चिकने डिम्बाशय –

पशुओं में पोषक तत्वों की कमी की वजह से डिम्बाशय का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है, तथा डिम्बाशय छोटे तथा गोल रह जाते हैं। इसके कारण एफ0एस0एच0 के प्रभाव से डिम्बाशय पर कोई फोलीकल परिपक्व नहीं होता है न ही ईस्ट्रोजन हार्मोन डिम्बाशय से निकलता है, जिसके कारण पशु गर्मी पर नहीं आता है। यह बॉझपन की अस्थाई अवस्था होती है। इस अवस्था के इलाज के लिए पशु को सन्तुलित आहार विशेषकर खनिज लवणों का मिश्रण जैसे फर्टीमिक्स अथवा एनमिन फोर्ट 30 – 50 ग्राम रोज देना चाहिए।

2. डिम्बाशय पर कार्पस ल्यूटियम का स्थाई होना –

रजस्खलन होने के बाद रजस्खलन होने की जगह पर कार्पस ल्यूटियम बनता है। पशु के गर्भित न रहने की अवस्था में कार्पस ल्यूटियम धीरे–धीरे कम होना शुरू हो जाता है और कार्पस ल्यूटियम समाप्त होने पर एफ0एस0एच0 हार्मोन्स के प्रभाव से पुनः डिम्बाशय का कोई फोलीकल प्रभावित होता है और प्रोइस्ट्रस अवस्था शुरू होती है। परन्तु कभी–कभी पशु के गर्भधारण न करने के बाद भी कार्पस ल्यूटियम कम नहीं होता है, जैसे का तैसा ही बना रहता है और ऐसी अवस्था में पशु गर्मी पर नहीं आता है। ये बॉझपन की अस्थाई अवस्था है। इसके इलाज के लिए पशु चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिए।

4. ऋतु के लक्षणों में कमी –

इस अवस्था में पशु नियमित रूप से गर्मी पर आता है तथा सही समय पर रजस्खलन होता है। परन्तु ईस्ट्रोजन हारमोन की कमी से ऋतु के पूरे लक्षण दिखाई नहीं देते हैं और पशु मालिक को पशु के ऋतु में आने का ज्ञान नहीं हो पाता है और पशु को वीर्यदान न होने के कारण पशु गर्भधारण नहीं कर पाता है। यह बॉझपन की अस्थाई अवस्था है। इसके इलाज के लिए पशु पालकों को यह बताया जाना आवश्यक है कि मात्र रंभाना ही गर्मी का लक्षण नहीं है। यदि पशु चंचल हो गया है, और उसका दुग्ध उत्पादन कम हो गया हो, हर समय पशु के थन में दूध भरा रहता हो तो पशु कृत्रिम वीर्यदान हेतु कृत्रिम वीर्यदान करता के पास ले जाना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

5. रजस्खलन में देरी –

सामान्यतः पशुओं में रजस्खलन गर्मी समाप्त होने के 08–12 घण्टे बाद होता है। यदि पशु सुबह गर्मी आती है तो शाम को अथवा पशु शाम को गर्मी पर आये तो दूसरे दिन कृत्रिम वीर्यदान करने से शुक्राणु रजवाहिनियों में रज का इन्तजार करते हैं और रजवाहिनियों में रज का फलीकरण हो जाता है। यदि रज का रजस्खलन देरी से होता है तो शुक्राणु इन्तजार करते–करते मर जाते हैं और रज का रज वाहिनियों में फलीकरण नहीं हो पाता है और पशु 21 दिन बाद पुनः गर्मी पर आ जाता है। यह अवस्था एल0एच0 हार्मोन के देर से निकलने के कारण होती है। यह अस्थाई बॉझपन की अवस्था ही इस अवस्था के इलाज के लिए पशु को देर से कृत्रिम वीर्यदान करना चाहिए साथ ही 12 घण्टे अन्तर से पुनः वीर्यदान करना चाहिए।

6. सिस्टिक डिम्बाशय –

पशु के गर्मी पर आने पर डिम्बाशय पर परिपक्व फोलीकल बनता है जो कि एल0एच0 हार्मोन के प्रभाव से टूट जाता है। कभी–कभी एल0एच0 हार्मोन की कमी की वजह से यह फोलीकल टूट नहीं पाता है तथा एफ0एस0एच0 हार्मोन के प्रभाव से डिम्बाशय पर दूसरा फोलीकल परिवक्व हो जाता है। इस प्रकार डिम्बाशय पर अनेकों परिपक्व फोलीकल बन जाते हैं और डिम्बाशय का आकार बड़ा हो जाता है। इस अवस्था में ईस्ट्रोजन हार्मोन की अधिकता के कारण पशु हर समय गर्मी पर बना रहता है परन्तु वीर्यदान करने पर रजस्खलन न होने के कारण गर्भधारण नहीं कर पाता है।

4. पोषक तत्वों की कमी –

पशुओं में पोषक तत्वों की कमी विशेषतः प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज लवणों की कमी के कारण या तो डिम्बाशय का पूर्ण विकास नहीं हो पाता अथवा फोलीकल परिपक्व नहीं हो पाते हैं जिससे पशु गर्मी पर नहीं आता है। इस अवस्था के इलाज के लिए पशु को सन्तुलित आहार देना चाहिए साथ ही खनिज लवणों की पूर्ति के लिए मिल्कमिन का 30 ग्राम पाउडर रोज देना चाहिए। विटामिन ए तथा डी की कमी के लिए विटामिन ए, डी, 5 ग्राम रोज 10 दिन तक दिया जा सकता है। विटामिन ई की कमी की पूर्ति के लिए पशु को अंकुरित जौ अथवा गेंहूँ खिलाना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–10

पशुओं को बधिया करना

(Castration of Animals)

बधिया करना किसे कहते हैं **? What is Castration?**

जब पशुओं में जनन ग्रन्थि क्रियायें (Gonadal Function of Overy and Testies) समाप्त कर दी जाती हैं तो उसे बधिया (Castration) करना कहते हैं। नर व मादा दोनों पशुओं को बधिया किया जा सकता है। मादा में बधिया करने को Spaying कहते हैं। मुर्गे को बधिया करना केपोनाइजेशन (Caponaisation) कहलाता है तथा बधिया किये हुए मुर्गे को केपन (Capon) कहा जाता है।

बधिया क्यों करना चाहिए **? Why to Castrate?**

निम्नलिखित किसी एक या एक से अधिक उद्देश्यों के लिए पशुओं को बधिया किया जाता है–

1. पशुओं में जनन शक्ति (Reproductive Energy) को अन्य कार्यों में प्रयोग में लाने के लिए जैसे– कार्य, मॉस, ऊन (Work, Meat, Wool) इत्यादि।
2. दूषित प्रजनन (Indiscriminate Breeding) को रोकने तथा नियन्त्रित प्रजनन (Planned-Breeding) अपनाने के लिए।
3. पशुओं में सहायक लैंगिक गुण (Secondary Sexual Characters) रोकने के लिए।
4. पशुओं को आसानी से काबू में लाने के लिए।
5. पशुओं में गोश्त की किस्म (Meat Quality) अच्छी बनाने के लिए।
6. पशु को मोटा करने के लिए।
7. पशुओं में जनन अंगों (Reproductive Organs) की बीमारियों की रोकथाम के लिए।

बधिया कब करना चाहिए **? When to Castrate?**

पशुओं में बधिया करने की आयु किसी उद्देश्य पर निर्भर करती है। कार्य करने वाले पशुओं में 1 से 1 ½ वर्ष की आयु के बाद बधिया किया जाता है। गोश्त प्राप्त करने के लिए पशु को लगभग एक महीने की आयु पर बधिया किया जाता है। जाड़ों का मौसम बधिया करने के लिए सबसे उत्तम है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

बधिया कैसे करना चाहिए **? How to Castrate?**

समय–समय पर विभिन्न विधियों को बधिया करने के लिए अपनाया जाता रहा है। पशुओं को बधिया करने की मुख्य–मुख्य विधियॉ निम्न प्रकार हैं –

1. Hummered Testies – एक लकड़ी के हथौड़े से वृषण (Testies) को पीटा जाता है। ऐसा करने से वृषण का कार्य करना समाप्त हो जाता है।
2. Incision Method – इस विधि में ऑपरेशन के द्वारा गोनाड (Gonads - Overy and Testies) को हटा दिया जाता है।
3. Burdizzo Castrator Method – नर में शुक्रवाहक (Vasdeferens) के पास एक बुर्डिजो कास्ट्रेटर (Burdizzo Castrator) की सहायता से वृषण–रज्जू (Spertmatic Cord) को दबा दिया जाता है ऐसा करने से वृषण में रक्त, ऑक्सीजन तथा भोजन आना बन्द हो जाता है और वृषण के अन्दर सभी प्रकार की क्रियायें बन्द हो जाती हैं जिसके फलस्वरूप इसमें शुक्रजनन (Spermatogenesis) की क्रिया नहीं होती है और शुक्राणु (Sperms) बनने बन्द हो जाते हैं।

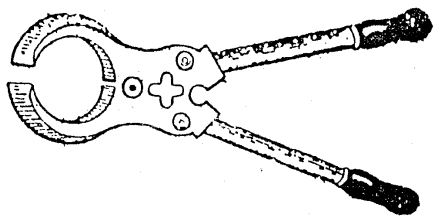

बुर्डिजो कास्ट्रेटर (**Burdizzo Castrator**)

4. Elastrator Method – इस विधि में कड़ी रबर के छल्लों को स्क्रोटल सैक (Scrotal Sac) के ऊपर लगाते हैं। इस क्रिया को एक इलास्ट्रेटर (Elastrator) की सहायता से किया जाता है। ऐसा करने से पूरे स्क्रोटल सैक में रक्त का आवागमन बन्द हो जाता है।
5. Chemical Castration – पशुओं में हार्मोन (Harmones) की सहायता से बधिया (Castration) किया जाता है।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अध्याय–11

प्रजनन

(**Breeding**)

प्रजनन पद्धतियॉ एवं महत्व –

नर तथा मादा पशुओं द्वारा सन्तान उत्पन्न करने की क्रिया को प्रजनन कहते हैं। पशु प्रजनन का प्रमुख उद्देश्य पशुओं को उन्नतिशील बनाना है। पशु को उन्नतिशील बनाने के लिए भोजन के बाद प्रजनन ही आता है। प्रजनन प्रणालियॉ ही पशु सुधार के लिए प्रजनक के पास एक अनुपम साधन है अर्थात पशु प्रजनक अपनी इच्छानुसार किसी प्रमुख उद्देश्य के लिए किसी एक प्रणाली को अपनाकर पशुओं का सुधार कर सकता है।

प्रजनन प्रणालियों को दो भागों में बॉटा जा सकता है और यह वर्गीकरण पशुओं के सम्बन्ध पर आधारित होता है। प्रजनन की यह प्रणालियॉ निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत की गई हैं –

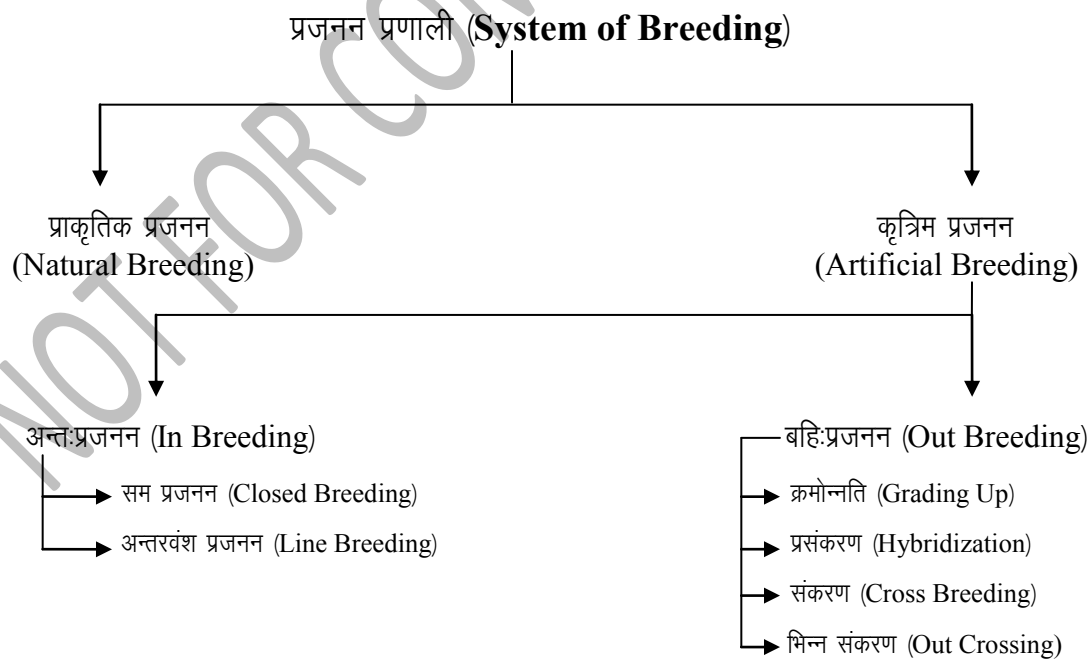

NOT FOR COMMERCIAL USE

कृत्रिम प्रजनन **(Artificial Breeding)**

1- अन्तः प्रजनन **(In Breeding)**

प्रजनन की वह विधि जिसमें सम्बन्धित नर एवं मादा पशुओं का प्रजनन कराया जाता है, अन्तः प्रजनन कहलाती है। अन्तः प्रजनन (In Breeding) में 4–5 पीढ़ी तक के सम्बन्धित पशुओं को ही प्रजनन कराया जाता है।

अन्तःप्रजनन के प्रकार (**Types of Inbreeding**)

प्रजनन करने वाले नर एवं मादा पशुओं के सम्बन्ध के आधार पर ही अन्तः प्रजनन को विभाजित किया जाता है अर्थात् उनमें कितने प्रतिशत सम्बन्ध है ? अन्तः प्रजनन (In Breeding) निम्नलिखित दो प्रकार का होता है–

1. सम प्रजनन (Closed Breeding)
2. अन्तरवंश प्रजनन (Line Breeding)

1. सम प्रजनन (**Closed Breeding**) – यह अन्तः प्रजनन का वह तरीका (Type) है जिसमें बहुत ही निकट से सम्बन्धित पशुओं का प्रजनन कराया जाता है जैसे–

   सगा भाई X सगी बहन (Full Brother X Full Sister)

   मॉ X बेटा (Dam X Son)

   पिता X बेटी (Sire X Daughter)

2. अन्तरवंश प्रजनन (**Line Breeding**) – यह अन्तः प्रजनन का वह तरीका है जिसमें कम सम्बन्धित पशुओं का प्रजनन कराया जाता है अर्थात सम प्रजनन के अतिरिक्त जो भी पशु 4–6 पीढ़ी तक सम्बन्धित हैं, उन्हैं आपस में मिलाया जाता है। प्रजनन की यह विधि किसी खास पूर्वज के अच्छे गुणों को उसकी सन्तान में स्थिर बनाये रखने के लिए की जाती है। इसके अर्न्तगत निम्न प्रकार के सम्बन्धित पशुओं में प्रजनन कराते हैं–

   चचेरा भाई X चचेरी बहन (Half Brother X Half Sister)

   बाबा X पोती (Female back to her Grand Sire)

   पोता X दादी (Male back to his Grand Dam)

NOT FOR COMMERCIAL USE

अन्तःप्रजनन का प्रभाव (**Effect to Inbreeding**)

सम प्रजनन (Closed Breeding) और अन्तरवंश प्रजनन (Line Breeding) का प्रभाव समान ही होता है। अन्तर केवल उनकी तीव्रता की मात्रा (Degree of their intensity) का होता है। अन्तरवंश प्रजनन की अपेक्षा सम प्रजनन में प्रभाव की मात्रा अधिक होती है, क्योंकि इसमें अधिक निकट सम्बन्धित पशुओं का प्रजनन कराया जाता है। ''सम प्रजनन'' और ''अन्तरवंश प्रजनन'' से लाभप्रद अथवा हानिप्रद प्रभाव होते हैं वे निम्नलिखित प्रकार से हैं–

A. आनुवांशिक प्रभाव (**Genotypic Effects**)

a. अन्तःप्रजनन द्वारा समानता (Homozygosity) बढ़ती है और भिन्नता (Heterozygosity) कम होती है, क्योंकि अन्तः प्रजनन समानता वाले जीन युग्मों (Alike alleles or gene pairs) के प्रतिशत को बढ़ाता है तथा असमान जीन युग्म (Dissimiliar alleles) की प्रतिशतता कम होती चली जाती है।

b. किसी अज्ञात पशु झुण्ड, जिसके शरीर की आनुवांशिक रचना (Genetic make up) ज्ञात नहीं है, उसके विषय में पूर्ण जानकारी अन्तः प्रजनन द्वारा की जा सकती है। इस प्रकार उत्तम पशुओं को चुनकर निम्न कोटि के पशुओं को पृथक किया जा सकता है।

c. अन्तःप्रजनन रक्त को संकेन्द्रित (Blood Concentration) करता है और अच्छे अथवा बुरे लक्षणों को इस विधि द्वारा स्थिर बनाये रखा जा सकता है।

d. प्रजनन की इस विधि द्वारा सॉड़ों में अपनी सन्तान में अपने गुणों को भेजने की क्षमता (Prepotency) बढ़ती है।

e. अन्तःप्रजनन आनुवांशिकता (Heredity) को बढ़ाता है और विचरण अथवा विभिन्नता (Variation) को कम करता है जिससे कि नये लक्षणों वाले पशु उत्पन्न नहीं होते हैं।

B. दृश्याकृति अथवा बाह्य प्रभाव (**Phenotypic or Outward Effects**)

अन्तः प्रजनन का आनुवांशिक प्रभाव (Genotypic Effects) पशुओं के युग्म जीन्स की समानता को बढ़ाता है, परन्तु इसका दृश्याकृति प्रभाव (Phenotypic Effects) लाभप्रद अथवा हानिप्रद किसी भी प्रकार का हो सकता है। अन्तः प्रजनन के दृश्याकृति प्रभाव निम्नलिखित हैं–

NOT FOR COMMERCIAL USE

a. पशु की वृद्धि दर पर प्रभाव (**Effect on Growth Rate**) – यह देखा गया है कि अन्तः प्रजनन द्वारा दूध देने वाले पशुओं (Dairy Cattle) तथा मुर्गियों की वृद्धि दर एवं प्रौढ़ावस्था के शारीरिक भार (Nature Weight) में कुछ सीमा में काफी कमी हो जाती है।

b. जनन कार्यो पर प्रभाव (**Effect on Reproductive Performance**) – सभी बड़े पशुओं की जनन क्षमता (Reproductive Efficiency) कम हो जाती है। सॉड़ों में अण्डकोष में वृद्धि रूककर होती है तथा बछिया भी देरी से युवा होती हैं। अन्तः प्रजनन, गैमीट जनन (Gemetogenesis) को कम करता है तथा भ्रूण (Embryo) की मृत्यु को बढ़ाता है।

c. पशुओं के ओज अथवा बल पर प्रभाव (**Effect on Vigour**) – अन्तः प्रजात पशु (Inbreed animal) बहिः प्रजात पशु (Outbreed animal) की अपेक्षा बाह्य वातावरण द्वारा अधिक प्रभावित होते हैं अर्थात् प्रतिकूल बाहरी वातावरण से बचने की शक्ति घट जाती है। अन्तः प्रजात पशुओं में मृत्यु दर भी अधिक होती है। अन्तःजनन से अनैच्छिक पशु (Runts) अधिक पैदा हो जाते हैं।

d. दुग्धोत्पादन पर प्रभाव (**Effect on Milk Production**) – अन्तः प्रजनन द्वारा पशुओं में दूध की मात्रा एवं वसा (Fat) प्रतिशत दोनों में कमी मालूम की गयी है।

e. अवगुण तथा मृत्यु कारकों को प्रकट होना (**Appearance of Lethals & Other Abnomalities**) – अन्तः प्रजात पशुओं (Inbreed) में बहिः प्रजनन (Outbreed) पशुओं की अपेक्षा पैत्रक अवगुण (Hereditary Abnomalities) तथा घातक कारक (Lethal Factor) अधिक पाये जाते हैं। अन्तः प्रजनन इन अवगुणों को उत्पन्न नहीं करता है अपितु छिपे हुए अवगुणों और गुणों को साधारण रूप से प्रकट करता है। बहिः प्रजनन में ये अवगुण बहिः प्रजात पशुओं में छिपे रहते हैं। अन्तः प्रजनन में यह इसलिए प्रकट हो जाते हैं, क्योंकि इसमें दोनों गुण, प्रधान (Dominant) और अप्रबल (Recessive) समान रूप में बढ़ते हैं, प्रायः प्रधान गुण अच्छे और अप्रबल गुण, अवगुण वाले होते हैं।

f. एकरूपता पर प्रभाव (**Effect on Uniformity**) – अन्तःप्रजनन द्वारा एकरूपता बढ़ती है। यह एकरूपता उनके उत्पादन, वृद्धि, रंग इत्यादि में आ जाती है।

उपरोक्त अध्ययन से यह प्रकट होता है कि अन्तःप्रजनन के आनुवांशिक प्रभाव (Genotypic Effects) लाभप्रद (Advantageous) तथा बाह्य या दृश्याकृति प्रभाव (Phenotypic Effects) हानिप्रद (Disadvantageous) होते हैं।

NOT FOR COMMERCIAL USE

अन्तःप्रजनन की उपयोगिता (**Utility of Inbreeding**)

अन्तः प्रजनन की दोनों प्रणालियों, सम प्रजनन और अन्तरवंश प्रजनन (Close Breeding & Line Breeding) में से द्वितीय प्रणाली अधिक उत्तम है। इसको निम्नलिखित अवस्था में पशु झुण्ड में प्रजननकर्ता द्वारा प्रयोग करने के लिए प्रमाणित (Recommend) किया गया है।

अन्तःप्रजनन का प्रयोग निम्न अवस्थाओं के लिए प्रमाणित किया है (**Recommended for the following types**) –

1. प्रजनन, औसत श्रेणी से अच्छे पशुओं में किया जाना चाहिए (Better than average herd)।
2. यदि पशु–प्रजनक (Breeder) इस प्रणाली के लाभ तथा इनका पूर्ण ज्ञान रखता हो (If the owner is well informed regarding both its advantages & disadvantages)।
3. पशु–झुण्ड में दो सॉड़ हों, ताकि अन्तः प्रजनन स्तर नियन्त्रण रखा जा सके (Herds with two sires to keep the inbreeding under control)।

अन्तःप्रजनन का प्रयोग निम्न अवस्थाओं के लिए प्रमाणित नहीं किया गया है। (**Not recommended for the following types**) –

1. व्यावसायिक और थोड़े पशुओं में नहीं करना चाहिए (Not in commercial herd)।
2. निम्न कोटि तथा औसत श्रेणी से नीचे वाले पशुओं में नहीं करना चाहिए (Poor herd or herd below average)।
3. जो पशु प्रजनक अन्तः प्रजनन के विषय में अनभिज्ञ हों (Herd with ignorant owner)।
4. पशु–झुण्ड जिनमें केवल एक सॉड़ हो (Herd with one sire)।

अन्तःप्रजनन के लाभ एवं महत्व (**Importance & Advantages of Inbreeding**) –

1. प्रजनन की इस प्रणाली द्वारा पशुओं के झुण्ड में समानता बढ़ती है तथा एकरूपता बढ़कर असमानता घटती है।
2. अज्ञात पशु–झुण्ड से एक शुद्ध नस्ल (True Strain) प्राप्त करने का अच्छा तरीका है।
3. पशुओं के चुनाव में सहायता मिलती है। जो पशु पैदा होने पर इच्छित गुण (Desirable Characters) प्रकट नहीं करते हैं, उन्हैं छॉटकर अलग करते जाते हैं।

NOT FOR COMMERCIAL USE

4. इसमें रक्त का संकेन्द्रीकरण (Concentration) होता है जिससे अच्छे अथवा बुरे गुण बढ़ते जाते हैं। मृत्यु कारक (Lethal Factors) प्रकट हो जाने पर उन पशुओं को नष्ट करके झुण्ड में से उन अवगुणों को सदा के लिए अलग कर सकते हैं।
5. पशुओं के अन्दर विभिन्नता (Variation) कम होकर पैत्रिकता (Heritability) बढ़ती है और उत्तम पूर्वजों के गुणों को बनाये रखा जा सकता है, साथ ही नई जाति नहीं बन पाती है।
6. पशुओं के अन्दर अपने गुणों को अपनी सन्तान में भेजने की योग्यता (Prepotency) बढ़ती है। यह गुण विशेषकर सॉड़ों में होता है।
7. प्रजनन की इस प्रणाली द्वारा विभिन्न फैमिली को अलग–अलग छॉटा जा सकता है।

अन्तःप्रजनन के अवगुण (**Disadvantages of Inbreeding**)

अन्तः प्रजनन के दृश्याकृति प्रायः सभी हानिप्रद होते हैं। अन्तः प्रजनन के विशेष अवगुण निम्नलिखित हैं–

1. पशुओं की वृद्धि दर कम हो जाती है।
2. दुग्ध उत्पादन की मात्रा एवं वसा प्रतिशत (Fat %) घट जाती है।
3. भ्रूण (Embryo) एवं बच्चों में मृत्युदर (Mortality) बढ़ती है।
4. प्रतिकूल वातावरण में बचने की शक्ति कम हो जाती है अर्थात् रोग का प्रभाव शीघ्र होता है।
5. पशुओं में अनेक अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं जिससे अनैच्छिक पशु (Undesirable) अधिक बढ़ जाते हैं।
6. अन्तः प्रजनन, पशुओं की जनन क्षमता (Reproductive Efficiency) को कम करता है।

2- बहिः प्रजनन (**Out Breeding**)

बहिः प्रजनन (Out Breeding) विधि अन्तः प्रजनन (In Breeding) से बिल्कुल विपरीत होती है। इस विधि में ऐसे असम्बन्धित नर व मादा पशुओं को आपस में मिलाया जाता है जिनका पिछला 4 से 6 पीढ़ियों में कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

बहिः प्रजनन का उद्देश्य यह होता है कि हम नई–नई पशु जातियॉ उत्पन्न कर सकें जिनके अन्दर अनेक प्रकार के गुण उत्पन्न हो जाएं, साथ ही वे लाभप्रद भी सिद्ध हों।

NOT FOR COMMERCIAL USE

बहिः प्रजनन के प्रकार (**Types of Outbreeding**)

बहिः प्रजनन निम्नलिखित चार प्रकार का होता है–

1.क्रमोन्नति (Grading Up) 2. प्रसंकरण (Hybridization)

3. संकरण (Cross Breeding) 4. भिन्न संकरण (Out Crossing)

1. क्रमोन्नति (**Grading Up System**) –

क्रमोन्नति प्रणाली में शुद्ध नस्ल वाले सॉड़ को अशुद्ध नस्ल की गाय (Non-Descript) के साथ सहवास (Mating) कराते हैं। इनसे जो सन्तान उत्पन्न होती है उन्हें फिर पीढ़ी दर पीढ़ी उसी नस्ल के सॉड़ मिलाते हैं। इस तरह यह क्रम चलता रहता है और सॉड़ के गुण धीरे–धीरे पशुओं में प्रवेश पाते रहते हैं। लगभग 6–7 पीढ़ी के बाद अशुद्ध नस्ल पशुओं का समूह प्रायः सॉड़ की नस्ल के समान गुणों वाला हो जाता है। जिन क्षेत्रों में शुद्ध नस्ल (Pure Breed) के सॉड़ प्रजनन के लिए कम मिलते हैं तथा जहॉ पर खराब नस्ल की गाय अधिक होती है, उनसे सुधार का केवल एक मात्र साधन क्रमोन्नति प्रणाली ही है।

"Grading is the practice of breeding pure breed sires of a given breed to native females or non-descript females and their offsprings for generation after generation."

इस विधि से देशी पशुओं को कम खर्च पर उन्नतिशील बनाया जा सकता है। पशुओं के गुणों में काफी सुधार हो जाता है। हमारे देश में प्रजनन योजनाओं के अन्तर्गत पशु सुधारने के लिए क्रमोन्नति विधि ही प्रयोग की जा रही है और देश में जहॉ भी प्रणाली अपनाई गई है वहॉ सफलता प्राप्त हुई है। उदाहरणार्थ – नीलगिरि पहाड़ी क्षेत्र की गाय को सिन्धी सॉड़ों की इस विधि से मिलाकर उन्नतिशील किया गया है।

प्रजनन की क्रमोन्नति प्रणाली में जब शुद्ध नस्ल के सॉड़ को अशुद्ध नस्ल वाली गाय से मिलाते हैं तो प्रथम पीढ़ी की सन्तान में सॉड़ के 50 % गुण आ जाते हैं। यदि इन सन्तानों को फिर इसी नस्ल के शुद्ध सॉड़ से मिलाया जाता है तो 6–7 पीढ़ियों की सन्तानों में क्रमशः 98.4 और 99.2 % गुण सॉड़ के आ जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि 6–7 पीढ़ियों में अशुद्ध पशु झुण्ड, शुद्ध नस्ल के गुणों वाले हो जाते हैं। प्रजनन की इस प्रणाली द्वारा क्रमोन्नति में होने वाला परिवर्तन अग्रलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट है–

NOT FOR COMMERCIAL USE

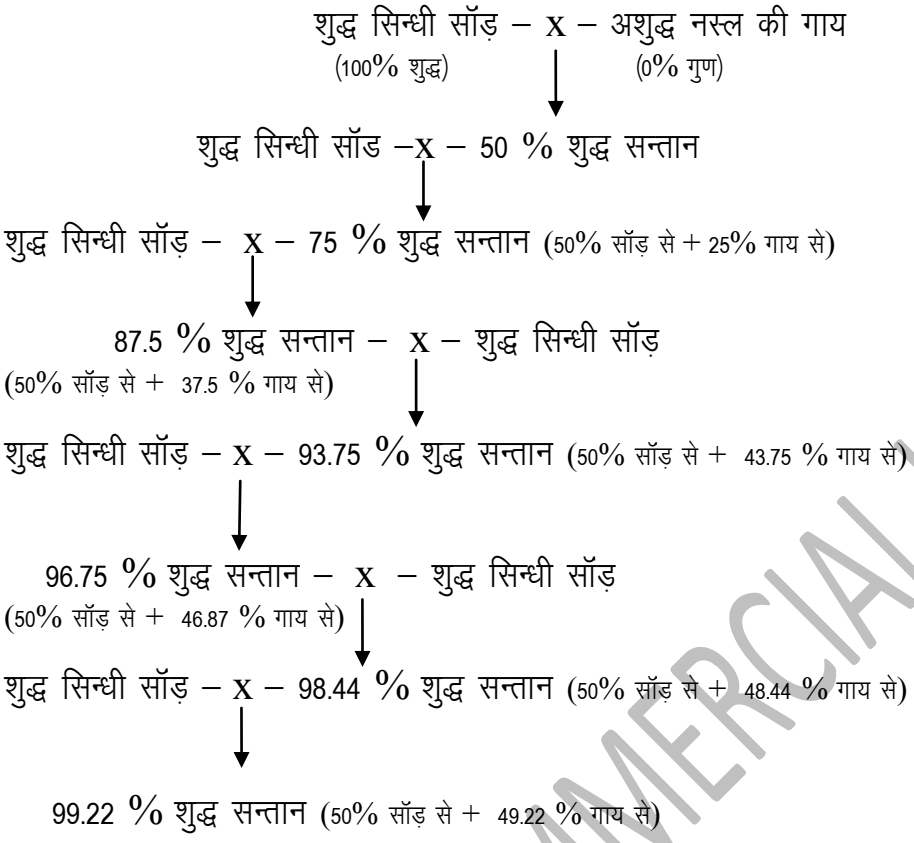

शुद्ध सिन्धी सॉड़ – x – अशुद्ध नस्ल की गाय
(100% शुद्ध) ↓ (0% गुण)

शुद्ध सिन्धी सॉड –x – 50 % शुद्ध सन्तान
↓
शुद्ध सिन्धी सॉड़ – x – 75 % शुद्ध सन्तान (50% सॉड़ से + 25% गाय से)
↓
87.5 % शुद्ध सन्तान – x – शुद्ध सिन्धी सॉड़
(50% सॉड़ से + 37.5 % गाय से) ↓
शुद्ध सिन्धी सॉड़ – x – 93.75 % शुद्ध सन्तान (50% सॉड़ से + 43.75 % गाय से)
↓
96.75 % शुद्ध सन्तान – x – शुद्ध सिन्धी सॉड़
(50% सॉड़ से + 46.87 % गाय से) ↓
शुद्ध सिन्धी सॉड़ – x – 98.44 % शुद्ध सन्तान (50% सॉड़ से + 48.44 % गाय से)
↓
99.22 % शुद्ध सन्तान (50% सॉड़ से + 49.22 % गाय से)

उपर्युक्त उदाहरण के अनुसार क्रमोन्नति प्रणाली (Grading Up) एक तेज और सस्ती विधि है जो पशुओं को उन्नत बनाने में सहायक होती है। पशुओं को इस विधि से प्रजनन कराने से जो गुणों में वृद्धि होती है आगे तालिका में दी गयी है –

तालिका

शुद्ध एवं अशुद्ध गुणों का प्रतिशत

पीढ़ियाँ (Generation)	देशी जाति के गुण (Impure Blood)	शुद्ध जाति के गुण (Pure Blood)
F1	50.0	50.00
F2	25.0	75.00
F3	12.5	87.50
F4	6.25	93.55
F5	3.12	96.87
F6	1.56	98.44
F7	0.78	99.22

जहॉ पर देशी नस्ल (Non-Descript) के पशुओं की संख्या अधिक है तथा उन्नतिशील सॉड़ कम हैं, वहॉ की प्रजनन समस्या इस विधि द्वारा हल की जा सकती है। विभिन्न श्रेणी के पशुओं, जैसे

NOT FOR COMMERCIAL USE

दूध वाले (Dairy Cattle), गोश्त वाले पशु (Beef Cattle) तथा भेंड़ और सुअरों पर क्रमोन्नति विधि के प्रयोग किये गये और यह निश्चित किया गया कि यह विधि इन वर्गों के पशुओं के लिए लाभप्रद है। यदि पीढ़ी दर पीढ़ी उत्तम सॉड़ों का प्रयोग किया जाए तो उत्पन्न सन्तानें बहुत उत्तम गुणों वाली होंगी परन्तु फिर भी वे सन्तानें 100 % नस्ल के गुणों वाली नहीं होती हैं।

"इसलिए क्रमोन्नति प्रणाली से उत्पन्न सॉड़ों को प्रजनन के लिए प्रयोग नहीं किया जाता है।**"**

क्रमोन्नति प्रजनन प्रणाली के लाभ (**Advantages of Grading Up**)

1. प्रजनन की यह प्रणाली पशुओं की उन्नति का सरल तथा सस्ता तरीका है।
2. इस प्रणाली में थोड़ा धन लगाकर कार्य प्रारम्भ हो सकता है और अनुभव प्राप्त करने की अच्छी प्रणाली है।
3. देशी नस्ल के पशुओं (Non-Descript) को सुधारने पर यह एक अच्छी प्रणाली है।
4. सामूहिक रूप से पशु समूह का सुधार सम्भव हो सकता है।
5. यह आसान विधि है और इस पर कोई विशेष ध्यान देने की जरूरत नहीं होती है।

क्रमोन्नति से हानियॉ (**Disdvantages of Grading Up**)

1. प्रथम पीढ़ी से उपरान्त सन्तान में नस्ल के गुणों की वृद्धि धीरे–धीरे होती है। अर्थात् प्रथम पीढ़ी की सन्तान में 50 % गुण आते हैं, दूसरी पीढ़ी में केवल 25 % गुणों में वृद्धि होती है और आगे की पीढ़ियों में यह कम होती चली जाती है। अतः पशु समूह का उत्थान करने के लिए बाद की पीढ़ियों में अधिक समय की आवश्यकता पड़ती है।
2. इस प्रजनन पद्धति से प्राप्त नर पशुओं को सॉड़ के रूप में प्रयोग करने की सलाह नहीं दी गयी है, क्योंकि अनैच्छिक गुण सन्तान के अन्दर अप्रबल अवस्था (Recessive Condition) में छिपे रहते हैं, जो प्रजनन करने पर संतति में आ जाते हैं।

2. प्रसंकरण (**Hybridization**)

यह बहिः प्रजनन का विस्तृत ढंग है जिसके अर्न्तगत विभिन्न जातियों (Species) और यहॉ तक कि प्रजातियों (Gener) के मादा एवं नर पशुओं को सहवास कराते हैं। इस प्रकार के प्रजनन से सन्तान में **"**संकर ओज**"** (Hybrid Vigour or Heterosis) उत्पन्न होता है। इसके फलस्वरूप सन्तान

NOT FOR COMMERCIAL USE

अपने माता–पिता से बिल्कुल भिन्न गुणों वाली हो जाती है। प्रसंकरण से उत्पन्न हुई सन्तान को प्रसंकर अथवा वर्णसंकर (**Hybrid**) कहते हैं।

प्रसंकर सन्तान में जो प्रसंकर ओज (Hybrid Vigour) उत्पन्न होता है वह विशेषकर निम्नलिखित गुणों में होता है तथा ये गुण प्रसंकर में अपने माता–पिता से बढ़कर होते हैं –

1. अधिक उत्पादन (Greater Productive)
2. अधिक वृद्धि दर (Increase in Growth Rate)
3. रोध निरोध शक्ति (Greater Resistance to Diseases)
4. आकार एवं प्रौढ़ावस्था के भार में वृद्धि (Increase in Size and Mature Weight)
5. प्रतिकूल वातावरण से बचाव की शक्ति (Lessened Susceptibility of the Action of Unfavourable Environmental Conditions)

विभिन्न प्रजातियों के पशुओं को प्रजनन करने पर उत्पन्न हुए प्रसंकर अधिक ओज (Vigour) वाले होते हैं, परन्तु साथ ही साथ यह भी देखा गया है कि उनकी जनन क्षमता (Reproductive Efficiency) नष्ट हो जाती है और अधिकतर प्रसंकर बॉझ (Sterile) होते हैं जो कि सन्तान उत्पादन नहीं कर सकते हैं। इस प्रजनन प्रणाली द्वारा उत्पन्न हुए प्रसंकरों में बॉझपन निम्नलिखित कारणों से होता है –

a. क्रोमोसोम का असामान्य विभाजन (**Abnormal Chromosomal Seperation**) – जनन कोशिका (Germ Cell) बनते समय क्रोमोसोम का विभाजन असामान्य रूप से होता है क्योंकि प्रजनन होनी वाली जातियों अथवा प्रजातियों में क्रोमोसोम संख्या पृथक–पृथक होती है, अतः इनका विभाजन भी पृथक संख्या में होता है। इस प्रकार नई सन्तान में बॉझपन हो जाता है।
b. गैमीट जनन क्रिया का न होना (**Non Gametogenesis**) – प्रायः मादा एवं नर प्रसंकर पशुओं के गैमीट जनन (Gametogenesis) क्रिया नहीं होती है, अर्थात मादा में अण्डाणु (Ova) और नर प्रसंकर पशुओं में शुक्राणु (Sperms) नहीं बनते हैं। इन जनन कोशिकाओं के न बनने से पशु बॉझ हो जाते हैं।
c. गैमीट का गर्भधारण अयोग्य होना (**The gametes is incapable of fertilization**) – प्रायः यह देखा गया है कि किसी–किसी नर एवं मादा प्रसंकरों में अण्डाणु (Ova) एवं शुक्राणु

NOT FOR COMMERCIAL USE

(Sperms) उत्पन्न होते हैं, परन्तु वे असामान्य होते हैं, जिसके कारण गर्भाधान नहीं होता है और प्रसंकर बॉझ बने रहते हैं।

प्रसंकरण में नर पशु बॉझ होते हैं, परन्तु कभी–कभी मादा बच्चे को जन्म देती है।

प्रसंकरण से उत्पन्न हुए मुख्य–मुख्य पशुओं के प्रसंकर इस प्रकार हैं –

i. खच्चर (**Mule**) – यह प्रसंकर गधे तथा घोड़ी के मिलने से बनता है। इसके अन्दर शक्ति अधिक पाई जाती है। नर पशु सभी बॉझ होते हैं लेकिन कभी–कभी मादा बच्चे देती हुई पाई गई है। निम्नलिखित गुणों के कारण इनको अधिक उत्तम या अच्छा माना जाता है –

(अ) खच्चर अपने माता–पिता से अधिक मजबूत होते हैं।

(ब) घोड़े की अपेक्षा अधिक दिनों तक जीवित रहते हैं। बीमारियों से कम प्रभावित होते हैं।

(स) युवावस्था में ही काम के लिए उपयोग किये जा सकते हैं और अच्छी तरह काम करते हैं।

(द) कठिन से कठिन काम इनसे लिया जा सकता है।

(ड़) गधे की अपेक्षा अधिक तेज और फुर्तीले होते हैं।

ii. हिन्नी (**Hinny**) – यह प्रसंकर खच्चर का विपरीत होता है। इसके अन्दर घोड़े (Stallion) और गधी को मिलाया जाता है। ये खच्चर की अपेक्षा घोड़े से अधिक मिलते हैं। यह तेजी से काम के लिए अच्छे होते हैं, परन्तु खच्चर के समान मजबूत नहीं होते और भारी काम के लिए भी अच्छे नहीं रहते हैं। ये पशु अधिकतर बॉझ होते हैं।

iii. जेबरायड (**Zebroid**) – मादा जेब्रा (Zebra) तथा घोड़े को मिलाने से यह प्रसंकर मिलता है। गर्म देशों में अधिकतर पाया जाता है, क्योंकि यह वहॉ के वातावरण के अनुकूल होता है और इसमें बीमारी से बचने की शक्ति अधिक होती है। ये घोड़े के समान कार्यशील (Active) होते हैं और गर्म जलवायु में जेब्रा के समान रह सकते हैं।

iv. पीनू (**Plenniu**) – यह गाय और पहाड़ी याक (Yalk) को मिलाने से उत्पन्न हुआ प्रसंकर है।

v. कैटेलो (**Cattalo**) – ये अमरीकन भैंसा सॉड़ (Buffalo Bull) तथा पालतू गाय को मिलाने से पैदा हुआ प्रसंकर है। नर पशु अधिकतर मरे हुए पैदा होते हैं। मादा पशु को जब पालतू सॉड़ से या जंगली सॉड़ से मिलाया जाता है तो भी कैटेलो पैदा होते हैं।

NOT FOR COMMERCIAL USE

vi. हिसार्डेल भेड़ (**Hissardale Sheep**) – मैरीनो भेंड़ा (Marino Ram) तथा बीकानेरी भेड़ (Bikaneri Ewe) को मिलाने से उत्पन्न हुई भेड़ की यह नई नस्ल है। यह प्रसंकर भारत में हिसार फार्म में उत्पन्न हुआ था। यह देश की जलवायु में अच्छी तरह रह सकता है और ऊन भी बीकानेरी की अपेक्षा अधिक मिलती है।

प्रसंकरण के लाभ (**Advantages of Hybridization**)

1. उत्पन्न हुए प्रसंकर में अपने माता–पिता की अपेक्षा उसके आकार, भार तथा वृद्धि में अधिकता पाई जाती है।
2. रोग से बचने की शक्ति अधिक होती है।
3. बाहरी वातावरण द्वारा बहुत कम प्रभावित होते हैं।
4. इनसे अधिक उत्पादन मिलता है।

प्रसंकरण से हानियॉ (**Disadvantags of Hybridization**)

विभिन्न प्रजातियों से उत्पन्न प्रसंकर प्राप्त होते हैं, वे अधिकतर बॉझ होते हैं।

3. संकरण (**Cross Breeding**)

प्रजनन की इस विधि में विभिन्न शुद्ध नस्लों के नर एवं मादा पशुओं को आपस में मिलाया जाता है। भारत में यह विधि बहुत ही सीमित रूप से प्रयोग की जाती है। इसका अभिप्राय किसी भी पशु को जिसके अन्दर विदेशी गुण हों को मिला देना ही संकरण (Cross Breeding) कहलाता है। संकरण प्रायः नये गुणों वाली सन्तान प्राप्त करने के लिए किया जाता है जिससे अधिक लाभ प्राप्त हो सके। उदाहरण के लिए हरियाणा नस्ल के शुद्ध सॉड़ को जब शुद्ध साहीवाल गाय के साथ मिलाया जाता है तो प्राप्त हुई सन्तान माता–पिता से अच्छी होती है, परन्तु इस सन्तान का यदि फिर से सन्तानोत्पादन के लिए पारस्परिक सहवास कराया जाता है तो दूसरी पीढ़ी में इनके गुण कम हो जाते हैं, अतः प्रजनन की यह विधि दुग्ध उत्पादन वाले पशुओं के लिए उत्तम नहीं है।

संकरण अधिकतर उस समय प्रयोग किया जाता है जबकि बच्चों को सीधा बाजार में बेचना होता है और उन्हें प्रजनन के लिए प्रयोग नहीं किया जाता है। प्रजनन की यह विधि अधिकतर मुर्गियों तथा सुअरों में सफलतापूर्वक प्रयोग की जाती है। नई जाति पैदा करने के लिए यह उत्तम तरीका है,

NOT FOR COMMERCIAL USE

क्योकि इसके अन्दर मादा तथा नर पशुओं की जाति के गुण सन्तान में एक नई जाति के रूप में आ जाते हैं।

संकरण के लाभ (**Advantages of Cross Breeding**)

1. प्रजनन की इस विधि द्वारा सन्तान के आकार, उत्पादन, शारीरिक भार तथा विकास आदि में अधिक वृद्धि होती है। ये सब प्रसंकरण ओज (Hybrid Vigour) द्वारा उत्पन्न होते हैं।
2. इस विधि से किसी भी जाति के इच्छित गुणों (Desirable Characteristics) को एक नई जाति में पैदा किया जा सकता है, जो कि प्रायः क्रास (Cross) होने वाली जातियों में कम प्रकट होते हैं।
3. नई जाति की सन्तान उत्पन्न करने का एक अच्छा साधन है जिससे कि व्यावसायिक रूप से अधिक धन प्राप्त होता है।
4. सन्तान के अन्दर पैतृक गुणों के आने की दर का अध्ययन कर सकते हैं और यह जाना जा सकता है कि नये बच्चों में गुण किस प्रकार आते हैं।

संकरण से हानियॉ (**Disadvantages of Cross Breeding**)

1. इस विधि द्वारा उत्पन्न हुए पशुओं की प्रजनन योग्यता (Breeding Merit) कम हो जाती है, क्योंकि उनके गुणों में भिन्नता (Heterozygosity) बढ़ती है।
2. प्रजनन की इस विधि को अपनाने के लिए दो या दो से अधिक शुद्ध नस्लों के पशुओं का होना या रखना आवश्यक है जिससे अधिक खर्चे की सम्भावना की जा सकती है। इस प्रकार फार्म की उन्नति की गति धीमी होती है।
3. प्रथम पीढ़ी के बाद पशुओं के अन्दर जो गुण होते हैं, वे धीर–धीरे कम होने लगते हैं और 4–5 पीढ़ी के बाद के पशु अपने माता–पिता से भी खराब होते हैं।
4. रोग से बचने की शक्ति कम हो जाती है और पशु प्रतिकूल वातावरण को सहन नहीं कर पाते हैं।

संकरण के उद्देश्य (**Objectives of cross Breeding**)

1. अधिक उत्पादन करने के लिए (Increased Production)
2. रोग से बचने की अधिक शक्ति के लिए (Increased Resistance to Diseases)
3. अधिक सन्तान उत्पन्न करने के लिए (Increased Fertility)

NOT FOR COMMERCIAL USE

4. वृद्धि दर में शीघ्रता के लिए (Increased Growth Rate)
5. नई नस्ल उत्पन्न करने के लिए (To Produce a New Breed)
6. नस्ल में इच्छित गुण उत्पन्न करने के लिए (To Produce the Desirable Characterts in a Breed)

संकरण विधियॉ (**Methods of Cross Breeding**)

संकरण के अन्दर विभिन्न शुद्ध नस्लों के नर एवं मादा पशुओं को निम्नलिखित तरीकों द्वारा मिलाया जा सकता है–

(1) क्रिस क्रॉसिंग (**Criss Crossing**) – जब दो शुद्ध नस्लों को (नर एवं मादा पशुओं को) एकान्तर रूप में लिया जाता है (Alternativ Mating) तो इसे क्रिस क्रॉसिंग कहते हैं। प्रजनन के इस तरीके द्वारा प्रत्येक पीढ़ी मं उत्पन्न हुए पशु अपनी प्रथम पीढ़ी के पशुओं से भिन्न होते रहते हैं। इस तरह से प्रजनन करने में हर पीढ़ी में गुणों का प्रतिशत परिवर्तन होता रहता है और पशुओं में हर बार संकरण ओज (Hybrid Vigour) बनी रहती है। चित्र में क्रिस क्रॉसिंग विधि को दर्शाया गया है।

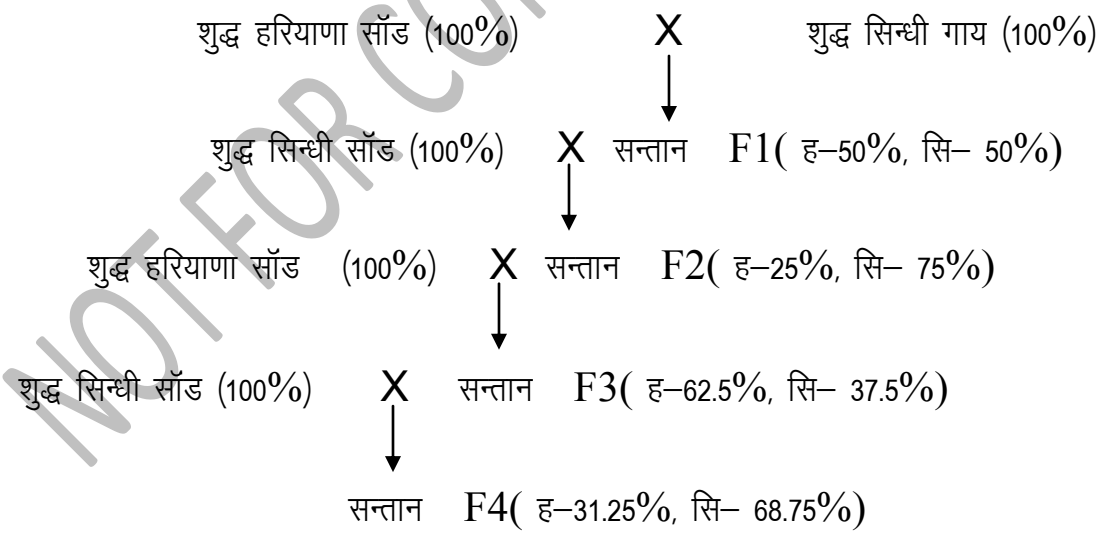

सिन्धी एवं हरियाणा नस्लों में क्रिस क्रॉसिंग का एक उदाहरण

(**Example of Criss crossing between Sindhi & Hariyana Breed**)

NOT FOR COMMERCIAL USE

(2) त्रिसंकरण (**Triple Crossing**) – प्रजनन की इस विधि में तीन से अधिक शुद्ध नस्लों के नर एवं मादा पशुओं को अदल–बदलकर मिलाते हैं जिससे विभिन्न पीढ़ियों के गुणों में असमानता स्थिर बनी रहती है। यह विधि चित्र द्वारा स्पष्ट की गई है।

यह विधि अधिक गोश्त के लिए पाले गये पशुओं में अपनाई जाती है जिससे कि सन्तान में हर बार ओज (Hybrid Vigour) प्राप्त हो सकें।

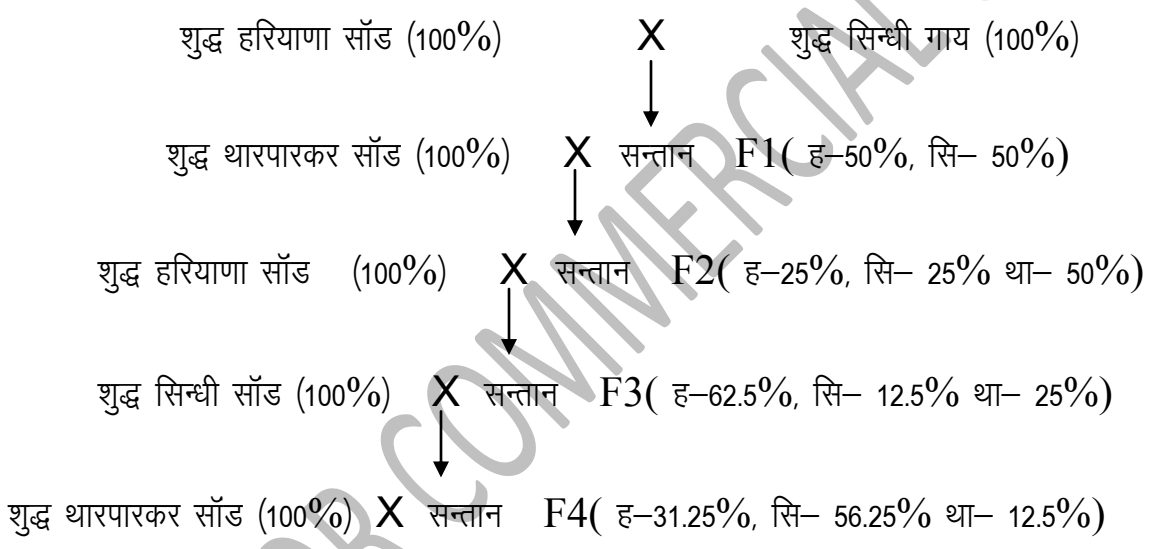

सिन्धी, हरियाणा एवं थारपारकर नस्लों में त्रिसंकरण का एक उदाहरण

(**Example of Triple Crossing between Sindhi, Hariyana and Tharparkar Breeds**)

(3) पित्र संकरण (**Back Crossing**) – जब संकर पशु (Cross Breed) को फिर से अपने पूर्वजों से सम्बन्धित सॉड़, जो कि पृथक नस्ल का हो, से मिलाया जाता है तो उसे पित्र संकरण (Back Crossing) कहते हैं।

NOT FOR COMMERCIAL USE

(2) त्रिसंकरण (**Triple Crossing**) – प्रजनन की इस विधि में तीन से अधिक शुद्ध नस्लों के नर एवं मादा पशुओं को अदल–बदलकर मिलाते हैं जिससे विभिन्न पीढ़ियों के गुणों में असमानता स्थिर बनी रहती है। यह विधि चित्र द्वारा स्पष्ट की गई है।

यह विधि अधिक गोश्त के लिए पाले गये पशुओं में अपनाई जाती है जिससे कि सन्तान में हर बार ओज (Hybrid Vigour) प्राप्त हो सकें।

(3) पित्र संकरण (Back Crossing) – जब संकर पशु (Cross Breed) को फिर से अपने पूर्वजों से सम्बन्धित सॉड़, जो कि पृथक नस्ल का हो, से मिलाया जाता है तो उसे पित्र संकरण (Back Crossing) कहते हैं।

(4) चरम संकरण (**Top Crossing**) – जब गाय अपने वंशावली के अन्तिम सॉड़ से मिलाई जाती है तो इसे 'चरम संकरण' (Top Crossing) कहते हैं।

4. भिन्न संकरण (**Out Crossing**)

भिन्न संकरण (Out Crossing) बहिः प्रजनन की वह विधि है जिसमें उन असम्बन्धित नर एवं मादा पशुओं को आपस में मिलाया जाता है जो एक ही शुद्ध नस्ल के होते हैं अर्थात् एक ही नस्ल के उन नर एवं मादा पशुओं को जिनका पहली 4–6 पीढ़ियों से कोई सम्बन्ध न हों। यह भिन्न संकरण कहलाता है। इस प्रणाली से उत्पन्न हुई सन्तान को भिन्न संकरण पशु (Out Breed) कहते हैं। उदाहरणार्थ जब हरियाणा नस्ल के शुद्ध सॉड़ को हरियाणा नस्ल की शुद्ध गाय से मिलाया जाता है।

पशुओं की उन्नति के लिए 'भिन्न संकरण' प्रजनन भी एक उत्तम विधि है। इसके साथ वरण (Selection) को अपनाना अधिक लाभप्रद है, क्योंकि वरण करके अच्छे पशुओं को रखने और औसत श्रेणी से नीचे गुण वाले पशुओं को अलग करते रहने से अच्छे गुण वाले पशु मिलते हैं। इन गुणों को अधिक समय तक स्थिर बनाये रखा जा सकता है। प्रायः देखा गया है कि कुछ समय बाद सन्तति में गुणों की वृद्धि रूक जाती है। भिन्न संकरण की इस अवस्था में पशुओं में अन्तः प्रजनन अपनाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से छिपे हुए गुण और अवगुण पशुओं में प्रकट हो जाते हैं। बुरे गुणों वालों को छॉटकर पृथक् किया जा सकता है और इच्छित गुण वाले पशु आगे के प्रजनन के लिए रखे जा सकते हैं। इस प्रकार सन्तान में इच्छित गुण प्राप्त होते रहते हैं।

भिन्न संकरण के लाभ (Advantages of Out Crossing)

NOT FOR COMMERCIAL USE

(1) प्रजनन के इस तरीके द्वारा आनुवांशिक गुणों (Genetic Factors) की दर पशुओं के लिए स्थिर रखी जा सकती है। यदि साथ–साथ सावधानीपूर्वक वरण (Selection) भी चलता रहे।

(2) यह विधि वहॉ अधिक उपयोगी है जहॉ पशुओं से पैत्रक गुण (Hereditary Characters) सन्तान में आने की अधिक सम्भावना होती है। जैसे– दुग्ध उत्पादन, वृद्धि दर आदि।

(3) प्रजनन की यह विधि उस पशु झुण्ड को सुधारने के लिए उत्तम है जो कि उस शुद्ध नस्ल के औसत श्रेणी के पशु से नीची श्रेणी (Below Average) का है।

(4) इस प्रजनन विधि में पशुओं में ओज (Vigour) तथा प्रजनन क्षमता (Reproductive Efficiency) काफी समय तक बनी रहती है।

भिन्न संकरण से हॉनियां (Disadvantages of Out Crossing)

क्रमशः भिन्न संकरण अपनाते रहने से पशुओं के अन्दर गुणों की वृद्धि रूक जाती है अर्थात् सन्तान अपने माता–पिता से उत्तम गुणों की नहीं होती है। ऐसी अवस्था में अन्तःप्रजनन (In Breeding) को अपनाना चाहिए।

NOT FOR COMMERCIAL USE